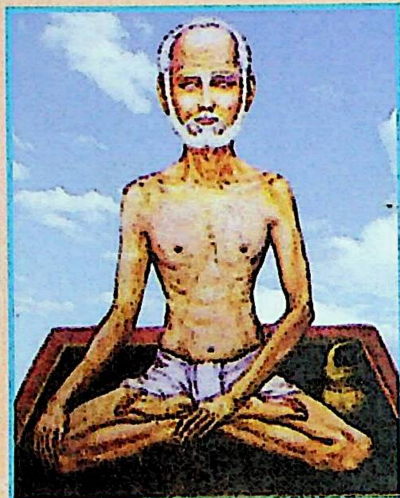
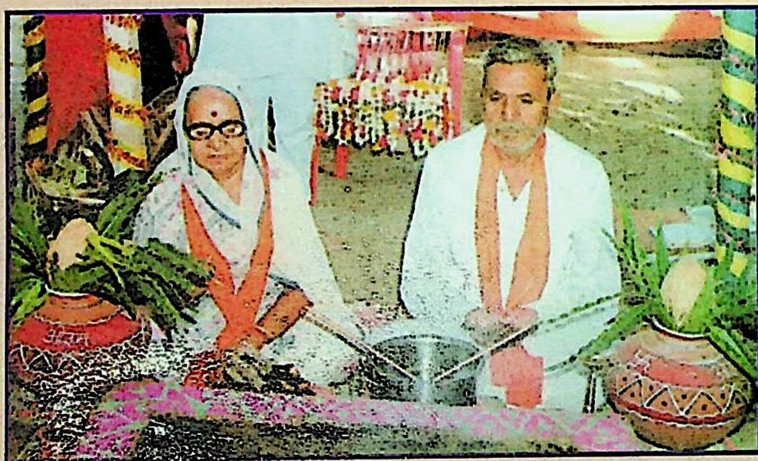
ओ३म्



श्रद्धया विहिता भक्तिः सद्यो मुक्तिप्रदायिनी

भक्ति-सत्सङ्ग कीर्त्तन



र् यज्ञेन कल्पताम्। स्वर् यज्ञेन कल्ताम्।।

॥ मन्त्रों के शब्दार्थ
कंठस्थ कर लीजिये ॥

॥ मन्त्रों के शब्दार्थ
कंठस्थ कर लीजि

॥ मन्त्रो के शब्दार्थ

ओ३म्

भक्ति-सत्सङ्ग-कीर्त्तन

सम्पादक

सत्यानन्द वेदवागीश

प्रकाशिका :

श्रीमती सुमित्रा आर्य

२७२, आर्यनगर, अलवर (३०१००१)

प्रकाशक : सत्यानन्द वेदवागीश

संस्करण : द्वितीय

प्राप्तिस्थान : सत्यानन्द वेदवागीश,
(i) c/o आर्यसमाज मन्दिर,
झंडा चौक, गांधीधाम (कच्छ), 370201
[गुजरात]
(ii) राधिका आर्य निवास,
89-A, शिव मन्दिर रोड, रातानाडा
जोधपुर, 342001

मूल्य : 40/-

मुद्रक : इण्डियन मैप सर्विस
सेक्टर 'जी', शास्त्री नगर, राम मंदिर के पास, जोधपुर
फोन : 0291 2612874

विषयानुक्रमणिका

प्रातःकालीन-प्रार्थना-मन्त्र

**ओ३म् प्रातर॒ग्निं प्रातरिन्द्रं॑ हवामहे प्रात॑र्मि॒त्रावरु॑णा प्रात॒र॒श्विना॑।
प्रा॒तर्भगं॑ पू॒षणं॒ ब्रह्म॑ण॒स्पतिं॑ प्रा॒तः सोम॑मु॒त रु॒द्रं हु॑वेम॥**

—ऋग्वेद ७।४१।१

प्रातः=प्रभातवेला में
अग्निम्=स्वप्रकाशस्वरूप
प्रातः=प्रातःकाल
इन्द्रम्=परम-ऐश्वर्य-युक्त
प्रातः=प्रातःकाल
मित्रावरुणा=प्रिय और सर्व-शक्तिमान्
प्रातः=प्रातःकाल
अश्विना=सूर्य और चन्द्र के उत्पादक परमेश्वर को
हवामहे=हम पुकारते हैं (=उसकी स्तुति करते हैं)
प्रातः=प्रातःकाल
भगम्=भजनीय-सेवनीय
पूषणम्=पुष्टिकर्त्ता
ब्रह्मणस्पतिम्=उपासक, वेद और ब्रह्माण्ड के पालनकर्ता प्रभु को [पुकारते हैं]
प्रातः=प्रातःकाल
सोमम्=अन्तर्यामी, प्रेरक
उत=और
रुद्रम्=पापियों को रुलानेहारे और सर्वरोगनाशक जगदीश्वर को
हुवेम=पुकारते हैं (=स्तुति प्रार्थना करते हैं)

**प्रा॒त॒र्जितं॒ भग॑मु॒ग्रं हु॑वेम व॒यं पु॒त्रमदि॑ते॒र्यो वि॑ध॒र्ता।
आ॒ध्रश्चि॒द्यं मन्य॑मानस्तु॒रश्चि॒द् राजा॑ चि॒द्यं भगं॑ भ॒क्षीत्याह॑॥**

—ऋग्वेद ७।४१।२

यः=जो
अदितेः=प्रकृति और अंतरिक्ष का
विधर्त्ता=विशेष रूप से धारण-कर्त्ता है [उस]
पुत्रम्=दुर्गति से बचानेवाले
प्रातर्जितम्=अत्यन्त गतिशील पदार्थों को भी जीतनेवाले
भगम्=ऐश्वर्य के दाता [और]
उग्रम्=तेजस्वी परमेश्वर को
हुवेम=पुकारते हैं (=उसकी स्तुति करते हैं)।
आध्रः=[जो] सब ओर से धारणकर्त्ता
तुरश्चित्=दुष्टों को [और]
यं चित्=जिस किसी को भी
मन्यमानः=जाननेवाले
राजा=सबके प्रकाशक
यम्=जिस

भगम्=भजनीय स्वरूप ईश्वर को
चित्=ही
भक्षीति=मैं ज्ञानपूर्वक सेवन करता हूँ
आह=[ऐसा] जिसके विषय में उपासक कहता है
[तं हुवेम=उसे हम पुकारते हैं]

भग॒ प्रणे॑त॒र्भग॒ सत्य॑राधो॒ भगे॒मां धिय॒मुद॑वा॒ दद॑न्नः।
भग॒ प्र णो॑ जनय॒ गोभि॒रश्वै॒र्भग॒ प्र नृभि॑र्नृ॒वन्तः॑ स्याम॥
—ऋग्वेद ७।४१।३

भग!=हे भजनीयस्वरूप!
प्रणेतः=हे सबके उत्पादक, प्रेरक!
भग!=हे ऐश्वर्यप्रद!
सत्यराधः!=हे सच्चे धनवाले
भग!=हे धर्माधार परमेश्वर! [आप]
इमाम्=इस परमैश्वर्यवाली
धियम्=बुद्धि को [हमें]
ददत्=देते हुए
नः=हमारी
उद्अव=उत्तमता से रक्षा कीजिये
भग!=हे यशस्वी प्रभो!
नः=हमें
गोभिः=गौओं के द्वारा [और]
अश्वैः=घोड़ों के द्वारा
प्र जनय=प्रगट कीजिये (=यशस्वी बनाइये)
भग!=हे सर्वज्ञ प्रभो! [हम]
नृभिः=उत्तम मनुष्यों से
नृवन्तः=बहुत मनुष्य वाले
प्र स्याम=अच्छे प्रकार होवें॥

उ॒तेदानीं॒ भग॑वन्तः स्यामो॒त प्र॑पि॒त्व उ॒त मध्ये॒ अह्ना॑म्।
उ॒तोदि॑ता मघव॒न्त्सूर्य॑स्य व॒यं दे॒वानां॑ सुम॒तौ स्या॑म॥
—ऋग्वेद ७।४१।४

मघवन्=हे परमपूजित प्रभो! [आपकी कृपा से]
इदानीम्=इसी समय
उत=और
प्रपित्वे=प्रकर्षता की प्राप्ति में (=दिन की पूर्णता में)
उत=और
अह्नाम्=दिनों के
मध्ये=मध्यभाग में
उत=और
सूर्यस्य=सूर्य के
उदिता=उदय समय में
वयम्=हम सब
भगवन्तः=श्रीमान् और शक्तिमान्
स्याम=होवें
उत=और [हम]
देवानाम्=पूर्ण विद्वान् धर्मात्माओं की
सुमतौ=उत्तम बुद्धि में (=बुद्धि के अनुकूल)
स्याम=[सदा] प्रवृत्त रहें॥

भग एव भगवाँ अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम।
तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भग पुरएता भवेह॥
—ऋग्वेद ७।४१।५

देवाः!=हे परमात्मा जी! और दिव्य आत्माओ! [आपकी कृपा से]
भगवान्=ऐश्वर्यशाली धर्मात्मा मनुष्य
भगे एव=ऐश्वर्य और धर्म में ही
अस्तु=[सदा] वर्त्तमान रहे
तेन=उस ऐश्वर्य आदि से
वयम्=हम सब
भगवन्तः=ऐश्वर्य-धर्म-ज्ञान वाले
स्याम=होवें
भग!=हे ऐश्वर्यादि से पूर्ण प्रभो!
तम्=उस
त्वा=तुझको
सर्वः इत्=सबका सब [मनुष्य-समुदाय]
जोहवीति=बारंबार पुकारता है।
सः=वह सर्वव्यापक
भग!=यशस्वी परमेश्वर! [तू]
इह=इस संसार में
नः=हमारा
पुरएता=अग्रगामी, आगे बढ़ानेवाला
भव=हो

हे ओ३म्! प्रातः तेरा, आह्वान कर रहे हैं।
श्रद्धा भरे हृदय से, गुणगान कर रहे हैं॥ १॥
हे ओ३म्! अग्नि! पूषण!, तुझ में न कोई दूषण।
हे सोम! रुद्र!तेरा, विज्ञान कर रहे हैं॥ २॥
हे ओ३म्! हे विधर्ता!, राजन्! तुझे 'नमस्ते'।
प्राप्तव्य तव दया से, आदान कर रहे हैं॥ ३॥
हे ओ३म्! सत्यराधः!, भगवन् प्रणेत तुझसे।
सज्जन-सुबुद्धि पाकर, दुःख-हान कर रहे हैं॥ ४॥
हे ओ३म्! नित्य मघवन्! ऐश्वर्य दान कर दे।
हम दिव्य बुद्धि का ही, उत्थान कर रहे हैं॥ ५॥
हे ओ३म्! हे सुनेता!, तुझको पुकारते हैं।
तू सेवनीय तेरा, सम्मान कर रहे हैं॥ ६॥
हे ओ३म्! तव नियम में, मन आदि को चलावें।
स्तोता सदैव तेरे, सुखपान कर रहे हैं॥ ७॥
हे ओ३म्! भूर्भुवः स्वः, मतियाँ सुकर्म में हों।
तू प्रेर दे हमारी, जो ध्यान कर रहे हैं॥ ८॥

[स्वामी व्रतानन्दजी संन्यासी
संस्थापक—श्रीगुरुकुल चित्तौड़गढ़]

शुभ-दिनचर्या

ओ३म् मिलेगा अमल अचल, तन आदिक से रे मल! चल॥ टेक॥

कोष्ठशुद्धि व्यायाम करूँगा, तन में बल आरोग्य भरूँगा।
दातुन से हों दाँत अटल, ओ३म् मिलेगा अमल अचल॥ १॥

स्नान करूँगा पावन जल से, मन शोधूँगा सच साबुन से।
आत्मा सन्ध्या से निर्मल, ओ३म् मिलेगा अमल अचल॥ २॥

आसन प्राणायाम चढ़ाकर, संयम प्रत्याहार बढ़ाकर।
योग करूँगा पूर्ण असल, ओ३म् मिलेगा अमल अचल॥ ३॥

आर्ष पुस्तकें नित्य पढ़ूँगा, उन्नति-गिरि पर अभय चढ़ूँगा।
शुद्ध हवन से अनिल सलिल, ओ३म् मिलेगा अमल अचल॥ ४॥

सात्त्विक भोजन परिमित करके, यम-नियमों का पालन करके।
वश में अन्तःकरण सकल, ओ३म् मिलेगा अमल अचल॥ ५॥

दैनिक उद्यम नियमित करके, धार्मिक धन संचित करके।
सेवा से कर जीवन सफल, ओ३म् मिलेगा अमल अचल॥ ६॥

आर्यावर्त्त देश उन्नत हो, अन्य देश भी नहिं अवनत हों।
यत्न करूँगा नित्य प्रबल, ओ३म् मिलेगा अमल अचल॥ ७॥

योगांगों से पाप मिटेगा, पाप-रहित को ओ३म् मिलेगा।
ओ३म् मिलन से जन्म सफल, ओ३म् मिलेगा अमल अचल॥ ८॥

लोहा चुंबक से खिंच जाये, जिमि बछड़ा गौ से मिल जाये।
ओ३म् मिलन हो शीघ्र सरल, ओ३म् मिलेगा अमल अचल॥ ९॥

[स्वामी व्रतानन्दजी संन्यासी
संस्थापक—श्रीगुरुकुल चित्तौड़गढ़]

राष्ट्रिय-प्रार्थना

ओम् आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः शूरऽइषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामेनिकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो नऽओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् ॥

—यजुः० २२।२२

ब्रह्म्=हे महत्तम प्रभो!
राष्ट्रे=राष्ट्र में
ब्राह्मणः=ब्राह्मण (=ज्ञानीजन)
ब्रह्मवर्चसी=ब्रह्मतेजधारी
आ जायताम्=सर्वत्र होवे
राजन्यः=क्षत्रिय
शूरः=महा पराक्रमी
इषव्यः=अस्त्रशस्त्रधारी
अतिव्याधी=बहुत ताड़ना देने वाला [और]
महारथः=विशाल वाहनों से युक्त
आ जायताम्=सर्वत्र होवे
धेनुः=गौ
दोग्ध्रीं=खूब दूध देनेवाली [हो]
अनड्वान्=बैल
वोढा=भार वहन करनेवाला [हो]
सप्तिः=अश्व
आशुः=शीघ्र गतिवाला [हो]
योषा=महिला
पुरन्धिः=बहुत गुणों को धारण करने वाली [हो]
अस्य=इस
यजमानस्य=यजमान का (=राष्ट्रिय व्यक्ति का)
युवा=जवान सन्तान
जिष्णुः=विजयशील
रथेष्ठाः=उत्तम वाहनों का स्वामी [और]
वीरः=पराक्रमी
आ जायताम्=सर्वत्र होवे।
नः=हमारी
निकामे निकामे=प्रत्येक कामना के समय
पर्जन्यः=मेघ
वर्षतु=बरसे।
नः=हमारे लिए
ओषधयः=अन्न और वृक्ष आदि
फलवत्यः=फलों से युक्त [होकर]
पच्यन्ताम्=[यथासमय] पकें।
नः=हमारा
योगक्षेमः=अप्राप्त की प्राप्ति और प्राप्त की रक्षा का कार्य
कल्पताम्=सिद्ध होवे।

ब्रह्मन्! स्वराष्ट्र में हों, द्विज ब्रह्मतेजधारी।
क्षत्रिय महारथी हों, अरिदल विनाशकारी॥
होवें दुधारु गौएँ, पशु अश्व आशुवाही।
आधार राष्ट्र की हों, नारी सुभग सदा ही॥
बलवान् सभ्य योद्धा, यजमानपुत्र होवें।
इच्छानुसार वर्षें, पर्जन्य ताप धोवें॥
फल-फूल से लदी हों, औषध अमोघ सारी।
हों योगक्षेमकारी स्वाधीनता हमारी॥

—०—

यज्ञोपवीत-धारण-मन्त्र

ओ३म् यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः।
यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि॥

—पा०गृ० २.२.१०

[हे यज्ञ के इच्छुक जन!]
परमम्=अत्यधिक
पवित्रम्=पवित्रता के साधन
यत्=जो कि
प्रजापतेः=प्रभु की [ओर से]
सहजम्=शुभकर्मों के साथ नियुक्त किया गया [है] उस
पुरस्तात्=[सब कर्मों से] पूर्व धारणीय
आयुष्यम्=आयु बढ़ानेवाले
अग्र्यम्=आगे की ओर ले जानेवाले [और]
शुभ्रम्=स्वच्छ
यज्ञोपवीतम्=यज्ञोपवीत को
प्रतिमुञ्च=धारण कर
यज्ञोपवीतम्=[यह] यज्ञोपवीत
बलम्=बल देने वाला [और]
तेजः=तेज बढ़ाने वाला
अस्तु=होवे। [हे यज्ञोपवीत ग्रहण किये हुए व्यक्ति!]
यज्ञोपवीतम्=[तुम] यज्ञोपवीत से युक्त
असि=[हो गये] हो।
यज्ञस्य=सन्ध्या-होम आदि यज्ञकर्म के [लिये]
त्वा=तुझे
यज्ञोपवीतेन=[इस] यज्ञोपवीत के द्वारा
उप नह्यामि=[अपने से] सम्बद्ध करता हूँ (=अपने साथ लगाता हूँ)

यज्ञोपवीत् लेकर खुद को निहारना है।
जीवन सुधारने का संकल्प धारना है॥ टेक॥
हर झूठ की तरफ से मुँह अपना फेरना है।
सच्चे व्रतों का पालन करने की प्रेरणा है॥
तप त्याग साधना को हरदम उभारना है।
जीवन सुधारने का संकल्प धारना है॥ १॥
गायत्री जाप सन्ध्या स्वाध्याय यज्ञ करना।
दुष्टों की संगति में हरगिज न पाँव धरना।
भगवान् को कभी न दिल से बिसारना है।
जीवन सुधारने का संकल्प धारना है॥ २॥
पितरों की टहल सेवा देवों की खूब पूजा।
ऋषियों के संग जैसा कर्त्तव्य है न दूजा।
निष्कपट स्वच्छ सुन्दर जीवन गुज़ारना है।
जीवन सुधारने का संकल्प धारना है॥ ३॥
नेकी के काम करके फल की न चाह लाना।
निष्काम भाव होकर औरों के काम आना।
शिक्षा का सूत्र है यह मन में विचारना है।
जीवन सुधारने का संकल्प धारना है॥ ४॥
शुभ चिह्न आर्यों का, यज्ञोपवीत है यह।
सब श्रेष्ठ लोग पहनें, ऋषियों की रीत है यह।
दुनियाँ में 'पथिक' इसके यश को निखारना है।
जीवन सुधारने का संकल्प धारना है॥ ५॥

यज्ञोपवीतधारी का सङ्कल्प

ओम्! तजूँ मैं प्रणहित प्राण, प्रण को नहीं तजूँ॥ ध्रुव०॥
जब मैं गुरुकुल में आया था, ब्रह्मसूत्र मैंने पाया था।
तब गुरुजी के सम्मुख जो प्रण, धारा उसे भजूँ॥ प्रण को०॥ १॥
सूर्यकिरण जिमि तम को नाशे, शिक्षक वैसे पाप विनाशे।
दोषों को स्वीकार करूँ, पछताऊँ और लजूँ॥ प्रण को०॥ २॥
ब्रह्मचर्य के सब नियमों को, पालन करके कठिनतमों को।
वीर्यलाभ कर तेजस्वी बन, नव नव नित्य सजूँ॥ प्रण को०॥ ३॥
दयानन्द ऋषि भीष्म-पितामह, दोनों ने व्रत पाला दुस्सह।
यथाशक्ति मैं उनके पथ पर, चलकर यज्ञ यजूँ॥ ४॥ प्रण को०॥

[स्वामी व्रतानन्द जी संन्यासी,
संस्थापक—श्रीगुरुकुल चित्तौड़गढ़]

सन्ध्योपासन-विधिः

शिखा-बन्धन [गायत्री-मन्त्र]

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्॥ —यजुः० ३६।३

ओ३म्=सर्वरक्षक परमेश्वर
भूः=प्राणदाता, नित्य
भुवः=दुःखहर्ता, ज्ञानवान्
स्वः=सुखस्वरूप, सुखदाता [है]
तत्=उस सर्वव्यापक
सवितुः=सर्वजगदुत्पादक, प्रेरक-
देवस्य=कामना करने योग्य परमेश्वर के
वरेण्यम्=अतिश्रेष्ठ
भर्गः=क्लेशनाशक, शुद्धस्वरूप को
धीमहि=हम धारण करें, उसका ध्यान करें।
यः=जो पूजनीय परमेश्वर
नः=हमारी
धियः=बुद्धियों को
प्रचोदयात्=उत्तम कर्मों में प्रेरित करे।

आचमन-मन्त्र

ओं शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये।
शं योरभिस्रवन्तु नः॥ —यजुः० ३६।१२

देवीः=सर्व-प्रकाशक, आनन्ददाता
आपः=सर्वव्यापक परमेश्वर तथा जल आदि
नः=हमारे
अभिष्टये=मनोवांछित सुख के लिये और
पीतये=पूर्णानन्द (=मोक्षसुख) के लिये
शम्=शान्ति और सुख करने वाले
भवन्तु=होवें। [वे]
नः=हमारे
अभि=अन्दर और बाहर दोनों ओर
शं योः=रोगों के शमन और भयनिवारण के लिये
स्रवन्तु=प्रवाहित होवें, तत्पर रहें।

इन्द्रियस्पर्श-मन्त्र

ओं वाक् वाक्। ओं प्राणः प्राणः। ओं चक्षुः चक्षुः। ओं श्रोत्रं श्रोत्रम्। ओं नाभिः। ओं हृदयम्। ओं कण्ठः। ओं शिरः। ओं बाहुभ्यां यशोबलम्॥ ओं करतल-करपृष्ठे॥

ओं वाक् वाक्=ईश्वरकृपा से मेरी वाणी और रसना इन्द्रिय [यशोबलम्] [यश और बल से युक्त होवें]

ओं प्राणः प्राणः [,,]=मेरे दोनों नथुनों के प्राण [यशस्वी और बलवान् होवें]

ओं चक्षुः चक्षुः [,,]=मेरे दोनों नेत्र [यशस्वी और बलवान् होवें]

ओं श्रोत्रं श्रोत्रम् [,,]=मेरे दोनों कान [यशस्वी और बलवान् होवें]

ओं नाभिः [,,]=मेरा पेट [यश और पाचनबल से युक्त हो]

ओं हृदयम् [,,]=मेरा हृदय [यश और बलसम्पन्न होवे]

ओं कण्ठः [,,]=मेरा कण्ठ [यशस्वी और बलवान् होवे]

ओं शिरः [,,]=मेरा सिर [यश और बल से युक्त होवे]

ओं बाहुभ्यां [,,]=मेरी दोनों भुजाओं के लिये यश और बल की प्राप्ति होवे।

ओं करतल करपृष्ठे=मेरी हथेली और करपृष्ठ भी [यश और बल से युक्त होवें]

मार्जन-मन्त्र

ओं भूः पुनातु शिरसि। ओं भुवः पुनातु नेत्रयोः। ओं स्वः पुनातु कण्ठे। ओं महः पुनातु हृदये। ओं जनः पुनातु नाभ्याम्। ओं तपः पुनातु पादयोः। ओं सत्यं पुनातु पुनः शिरसि। ओं खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र।

ओम्=सर्वरक्षक
भूः=प्राणाधार परमात्मा [कृपा करके]
शिरसि=[मेरे] सिर में
पुनातु=पवित्रता करे
ओम्=सबको गति देने वाला-
भुवः=दुःखहर्ता परमात्मा
नेत्रयोः=[मेरे] नेत्रों में
पुनातु=पवित्रता करे
ओम्=सबसे प्रियतम-
स्वः=सुखदाता परमेश्वर
कण्ठे=[मेरे] कण्ठ में
पुनातु=पवित्रता करे
ओम्=तृप्ति कराने वाला
महः=महान् पूजनीय ईश्वर
हृदये=[मेरे] हृदय में
पुनातु=पवित्रता करे
ओम्=सबमें प्रविष्ट-
जनः=सबको उत्पन्न करने वाला परमेश्वर
नाभ्याम्=[मेरे] नाभि (=पेट) में
पुनातु=पवित्रता करे
ओम्=ज्ञानदाता
तपः=सामर्थ्यवान् परमेश्वर
पादयोः=[मेरे] पाँवों में
पुनातु=पवित्रता करे
ओम्=कामना करने योग्य
सत्यम्=सत्यस्वरूप परमात्मा

शिरसि=[मेरे] सिर में
पुनः=बारं बार
पुनातु=पवित्रता करे
ओम्=भक्ति करने योग्य
खम्=सर्वव्यापक
ब्रह्म=सबसे बड़ा परमेश्वर
सर्वत्र=[मेरे] सब अंगों में
पुनातु=पवित्रता करे।

प्राणायाम-मन्त्र

ओं भूः। ओं भुवः। ओं स्वः। ओं महः। ओं जनः। ओं तपः। ओं सत्यम्॥

ओं भूः=परमात्मा नित्य और प्राणाधार है।
ओं भुवः=परमेश्वर दुःखहर्त्ता और ज्ञानमय है
ओं स्वः=परमात्मा सुखस्वरूप और सुखप्रदाता है।
ओं महः=ईश्वर महत्तम और पूजनीय है
ओं जनः=परमेश्वर सबको उत्पन्न करने वाला है।
ओं तपः=परमात्मा ऐश्वर्यवान् और दुष्टसन्तापक है।
ओं सत्यम्=परमेश्वर अविनाशी है।

अघमर्षण-मन्त्र

ओम् ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत।
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रोऽअर्णवः॥ १॥

—ऋ० १०.१९०.१

ऋतम्=नित्य वेदज्ञान
च=और
सत्यम् च=कार्यरूप जगत्
अभीद्धात्=ज्ञानरूप दीप्ति वाले-
तपसः=ईश्वरीय सामर्थ्य से
अध्यजायत=उत्पन्न हुआ और उत्पन्न होता है
ततः=उसी [ईश्वरीय सामर्थ्य] से
रात्री=प्रलयावस्था
अजायत=उत्पन्न हुई, उत्पन्न होती है
ततः=उसी [ईश्वरीय सामर्थ्य] से
अर्णवः=वाष्परूपी जलवाला [और]
समुद्रः=तरल जलवाला समुद्र
[अजायत]=[उत्पन्न होता है]।

समुद्रादर्णवादधि संवत्सरोऽअजायत।
अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी॥ २॥

—ऋ० १०.१९०.२

समुद्राद्=जलमय समुद्र-[और]
अर्णवाद्=मेघरूप समुद्र के
अधि=पश्चात्
संवत्सरः=वर्ष
अजायत=उत्पन्न हुआ, उत्पन्न होता है।
विश्वस्य=समस्त-
मिषतः=निमेष और उन्मेष वाले जड़ और चेतन जगत् का
वशी=वशीकर्त्ता (वश में रखने वाला) परमेश्वर
अहोरात्राणि=दिन-रात आदि को
विदधत्=रचता हुआ [सदा वर्त्तमान रहता है]।

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्।
दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः ॥ ३ ॥

—ऋ० १०.१९०.३

धाता=विधाता परमेश्वर ने
सूर्याचन्द्रमसौ=सूर्यलोक और चन्द्रलोक को
च=और
दिवम्=द्युलोक को
च=और
पृथिवीम्=पृथिवीलोक को [तथा]
अन्तरिक्षम्=अन्तरिक्षलोक को
अथो=और
स्वः=अन्य लोकसमूह को और सब लोकों के सुख को
यथापूर्वम्=पूर्व सृष्टि के अनुरूप ही
अकल्पयत्=रचा है।

आचमन-मन्त्र

ओं शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये।
शं योरभिस्रवन्तु नः॥ —यजुः० ३६।१२

देवीः=सर्व-प्रकाशक, आनन्ददाता
आपः=सर्वव्यापक परमेश्वर तथा जल आदि
नः=हमारे
अभिष्टये=मनोवांछित सुख के लिये और
पीतये=पूर्णानन्द (=मोक्षसुख) के लिये
शम्=शान्ति और सुख करने वाले
भवन्तु=होवें। [वे]
नः=हमारे
अभि=अन्दर और बाहर दोनों ओर
शं योः=रोगों के शमन और भयनिवारण के लिये
स्रवन्तु=प्रवाहित होवें, तत्पर रहें।

मनसा परिक्रमा-मन्त्र

ओम्। प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षितादित्या इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥ १ ॥ —अथर्व० ३.२७.१

प्राची=पूर्व अथवा मुख के सामने वाली
दिक्=दिशा [है, उसमें]
अग्निः=ज्ञानस्वरूप परमेश्वर
अधिपतिः=स्वामी [है]
असितः=बन्धन रहित वह ईश्वर
रक्षिता=रक्षक [है]
आदित्याः=सूर्यकिरण तथा ईश्वरीय गुण
इषवः=बाण [के समान सहायक साधन हैं]
तेभ्यः=उन-
अधिपतिभ्यः=स्वामी परमेश्वरजी के लिये
नमः=[हमारा] प्रणाम
अस्तु=[होवे]
रक्षितृभ्यः=उन रक्षक ईश्वर जी के लिये
नमः=[हमारा] नमस्कार [होवे]
इषुभ्यः=उन बाणों [सहायक ईश्वरीय गुणों के प्रति और सूर्यकिरणों] के लिये
नमः=हमारा आदर और रुचि [होवे]
एभ्यः=इन सबके लिये
नमः=नमस्कार एवं रुचि
अस्तु=होवे।
यः=जो प्राणी
अस्मान्=हमें (=हमसे)
द्वेष्टि=द्वेष करता है [तथा]
यम्=जिसे (=जिससे)
वयम्=हम
द्विष्मः=द्वेष करते हैं
तम्=उस [द्वेषभाव] को
वः=भक्तों द्वारा सेवनीय आप ईश्वर के
जम्भे=[न्यायरूप] दाढ़ में
दध्मः=रखते हैं [दग्ध करते हैं]।

दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता पितर इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥ २ ॥ —अथर्व० ३.३७.२

दक्षिणा=दक्षिण अथवा दाहिनी ओर की
दिक्=दिशा [है] [उसमें]
इन्द्रः=ऐश्वर्य वाला ईश्वर
अधिपतिः=स्वामी है
तिरश्चिराजिः=कीट-वृश्चिक आदि प्राणियों का समूह
रक्षिता=[विषवात-ग्रहण द्वारा]

[हमारा] रक्षक है
पितरः=पालक ज्ञानी लोग
इषवः=बाणों के समान [सहायक हैं]
तेभ्यः०=[पूर्ववत्]।

प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकू रक्षितान्नमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥ ३ ॥ —अथर्व० ३.२७.३

प्रतीची=पश्चिम अथवा पृष्ठभाग वाली
दिक्=दिशा [है, उसमें]
वरुणः=सर्वोत्तम न्यायकारी राजा परमेश्वर
अधिपतिः=स्वामी है।
पृदाकुः=अजगर आदि प्राणिसमूह
रक्षिता=[विषवात-भक्षण द्वारा] रक्षक [है]
अन्नम्=अन्न आदि पार्थिव पदार्थ
इषवः=बाणों के समान [सहायक] हैं।
तेभ्यः०=[पूर्ववत्]।

उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिताशनिरिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतभ्या नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥ ४ ॥ —अथर्व० ३.२७.४

उदीची=उत्तर अथवा बाईं ओर की
दिक्=दिशा [है] [उसमें]
सोमः=शान्तिदाता ईश्वर
अधिपतिः=स्वामी [है]
स्वजः=सर्वथा अजन्मा परमेश्वर
रक्षिता=रक्षक [है]
अशनिः=विद्युत् आदि
इषवः=बाणों के समान [सहायक] हैं।
तेभ्यः०=[पूर्ववत्]।

ध्रुवा दिग्विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥ ५ ॥ —अथर्व० ३.२७.५

ध्रुवा=नीचे की
दिक्=दिशा [है], [उसमें]
विष्णुः=सर्वव्यापक परमात्मा
अधिपतिः=स्वामी [है]
कल्माषग्रीवः=हरित वृक्ष-वनस्पति-समूह
रक्षिता=रक्षक [है]
वीरुधः=लता-गुल्म-ओषधि आदि
इषवः=बाणों के समान [सहायक] हैं।
तेभ्यः०=आदि पूर्ववत्।

ऊर्ध्वा दिग्बृहस्पतिरधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्षमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ ६॥ —अथर्व० ३.२७.६

ऊर्ध्वा=ऊपर की
दिक्=दिशा [है], [उसमें]
बृहस्पतिः=वाणी और ब्रह्माण्ड का पालक परमात्मा
अधिपतिः=स्वामी [है]
श्वित्रः=शुद्धस्वरूप परमात्मा
रक्षिता=रक्षक [है]
वर्षम्=वर्षा
इषवः=बाणों के समान [सहायक] हैं।
तेभ्यः०=आदि पूर्ववत्।

उपस्थान-मन्त्र

ओ३म् उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्॥ १॥
—यजुः० ३५।१४

वयम्=हम [उपासक]
तमसः परि=अज्ञान अन्धकार से पृथक् वर्त्तमान-
स्वः=आनन्दस्वरूप-
उत्तरम्=प्रलयावस्था के पश्चात् भी विद्यमान-
देवत्रा=देवों में (=दिव्य गुण वाले पदार्थों में)
देवम्=अनन्त-दिव्यगुणयुक्त तथा दाता-
ज्योतिः=स्वप्रकाशस्वरूप-
उत्तमम्=सबसे उत्कृष्ट=श्रेष्ठ-
सूर्यम्=प्रेरक, चराचर के आत्मा परमेश्वर को
पश्यन्तः=नित्य साक्षात् करते हुए
उद् अगन्म=उत्तमता पूर्वक प्राप्त करते हैं [मोक्षावस्था में पूर्णरूप से पा लेते हैं]।

उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः।
दृशे विश्वाय सूर्यम्॥ २॥ —यजुः० ३३।३१

केतवः=नियन्त्रण करने वाले, जनाने वाले और प्रकाश करने वाले ईश्वरीय गुण
विश्वाय=सम्पूर्ण विश्व के
दृशे=देखने के लिये
त्यम्=उस
जातवेदसम्=प्रसिद्ध और उत्पन्न हुए पदार्थ मात्र के ज्ञाता-
सूर्यम्=प्रेरक, चराचर के आत्मा-
देवम्=परमदेव ईश्वर को
उद् उ=निश्चयपूर्वक ही
वहन्ति=प्राप्त कराते हैं।

चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आप्रा द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षꣳ सूर्यऽआत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा॥ ३॥
—यजुः० ७।४२

देवानाम्=विद्वानों का
चित्रम्=अद्भुत
अनीकम्=बल [और]
मित्रस्य=स्नेही मनुष्य का, सूर्यलोक का और प्राण का
वरुणस्य=श्रेष्ठ गुण-कर्म वाले का
अग्नेः=विद्युत् आदि अग्नि का
चक्षुः=प्रकाशक [परमेश्वर]
उद् अगात्=भलीभाँति प्राप्त हो गया है। [उसने]
द्यावापृथिवी=द्युलोक और पृथिवीलोक को [तथा]
अन्तरिक्षम्=अन्तरिक्षलोक को
आ प्राः=व्याप्त किया हुआ है। [वह]
सूर्यः=प्रेरक, गतिदाता ईश्वर
जगतः=चेतन संसार का
च=और
तस्थुषः=जड़ संसार का
आत्मा=आत्मा (=अन्तर्यामी) [है]
स्वाहा=[यह] सत्य वचन [है]।

तच्चक्षुर् देवहितं पुरस्ताच् छुक्रमुच् चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्॥ ४॥
—यजुः० ३६।२४

चक्षुः=सबको देखने वाला
देवहितम्=धर्मात्मा-विद्वानों का हितकारी
पुरस्तात्=सृष्टि से पूर्व भी विद्यमान [और]
शुक्रम्=शुद्धस्वरूप परब्रह्म
उत् चरत्=उत्तमरीति से व्याप्त एवं प्राप्त है
तत्=उस [ब्रह्म] को
शतम्=सौ
शरदः=शरद् ऋतुओं तक (=सौ वर्ष तक)
पश्येम=हम साक्षात् करें
शतम्=सौ
शरदः=वर्ष पर्यन्त
जीवेम=हम जीवित रहें।
शतम्=सौ
शरदः=वर्ष तक
शृणुयाम=हम [ईश्वर-गुण आदि] सुनें
शतम्=सौ
शरदः=वर्ष पर्यन्त
प्र ब्रवाम=बोलें, उपदेश करें।
शतम्=सौ
शरदः=वर्ष तक
अदीनाः=सम्पन्न ऐश्वर्यवान्

स्याम=होवें
च=और
शतात्=सौ
शरदः=वर्ष से भी
भूयः=अधिक [देखें, जीवें, सुनें, बोलें और सम्पन्न बनें]।

गायत्री-मन्त्र

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्॥ —यजुः० ३६।३

ओ३म्=सर्वरक्षक परमेश्वर
भूः=प्राणदाता, नित्य
भुवः=दुःखहर्ता, ज्ञानवान्
स्वः=सुखस्वरूप, सुखदाता [है]
तत्=उस सर्वव्यापक
सवितुः=सर्वजगदुत्पादक, प्रेरक-
देवस्य=कामना करने योग्य परमेश्वर के
वरेण्यम्=अतिश्रेष्ठ
भर्गः=क्लेश-नाशक, शुद्धस्वरूप को
धीमहि=हम धारण करें, उसका ध्यान करें।
यः=जो पूजनीय परमेश्वर
नः=हमारी
धियः=बुद्धियों को
प्रचोदयात्=उत्तम कर्मों में प्रेरित करे।

समर्पण-प्रार्थना

हे ईश्वर दयानिधे! भवत्कृपयानेन जपोपासनादि-कर्मणा धर्मार्थकाममोक्षाणां सद्यः सिद्धिर्भवेन्नः।

हे ईश्वर!=हे प्रभो!
दयानिधे!=हे दया के सागर!
भवत्कृपया=आपकी कृपा से
अनेन=इस
जप-उपासनादि-कर्मणा=जप और उपासना आदि कर्म से
नः=हमारी
धर्मार्थकामकोक्षाणाम्=धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष सम्बन्धी
सिद्धिः=सफलता
सद्यः=शीघ्र
भवेत्=होवे।

नमस्कार-मन्त्रः

ओं नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च॥

—यजुः० १६।४१

शम्भवाय=शान्ति-स्वरूप ईश्वर के लिये
च=और
मयोभवाय=सुखस्वरूप ईश्वर के लिये
नमः=नमस्कार [हो]

च=और
शङ्कराय=शान्ति करनेवाले प्रभु के लिये
च=और
मयस्कराय=सुख देनेवाले प्रभु के लिये
नमः=नमस्कार [हो]

च=और
शिवाय=कल्याणस्वरूप भगवान् के लिये
च=और
शिवतराय=अत्यधिक मङ्गलमय कल्याणकारी भगवान् के लिये
नमः=नमस्कार [हो]

—०—

अग्निहोत्र-विधिः

आचमन-मन्त्राः

ओम् अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ॥ १ ॥

ओम्=हे सर्वरक्षक-
अमृत!=अविनाशी ईश्वर! [तू]
उपस्तरणम्=[मेरा] आश्रय
असि=है
स्वाहा=[यह मेरा] विश्वस्त वचन [है]

ओम् अमृतापिधानमसि स्वाहा ॥ २ ॥

ओम्=हे प्रियतम
अमृत=अविनश्वर ईश्वर! [तू]
अपिधानम्=[मेरा] आच्छादक (=विघ्ननिवारक)
असि=है
स्वाहा=[यह मेरा] हार्दिक वचन [है]

ओम् सत्यं यशः श्रीर् मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ॥ ३ ॥

ओम्=हे रक्षक परमेश्वर! [आपकी कृपा से]
मयि=मुझमें
सत्यम्=सत्याचरण
यशः=कीर्त्ति
श्रीः=शोभा
श्रीः=धन-लक्ष्मी
श्रयताम्=निवास करें, सदा रहें
स्वाहा=[यह मेरा] हार्दिक निवेदन [है]

अङ्गस्पर्श-मन्त्र

ओं वाङ् म आस्येऽस्तु ॥ १ ॥

ओम्=हे ईश्वर!	वाक्=वाणी
मे=मेरे	अस्तु=[सदा] रहे
आस्ये=मुख में	

ओं नसोर्मे प्राणोऽस्तु ॥ २ ॥

ओम्=हे परमेश्वर!	प्राणः=प्राण
मे=मेरे	अस्तु=[सदा] रहे
नसोः=नथनों में	

ओम् अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु ॥ ३ ॥

ओम्=हे प्रभो!	चक्षुः=दर्शनशक्ति
मे=मेरी	अस्तु=[सदा] रहे।
अक्ष्णोः=आँखों में	

ओं कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु ॥ ४ ॥

ओम्=हे परमात्मन्!	श्रोत्रम्=श्रवणशक्ति
मे=मेरे	अस्तु=[सदा] रहे।
कर्णयोः=कानों में	

ओं बाह्वोर्मे बलमस्तु ॥ ५ ॥

ओम्=हे परमेश्वर!	बलम्=बल
मे=मेरी	अस्तु=[सदा] रहे।
बाह्वोः=भुजाओं में	

ओम् ऊर्वोर्मे ओजोऽस्तु ॥ ६ ॥

ओम्=हे ईश्वर!	ओजः=सामर्थ्य, वेग
मे=मेरी	अस्तु=[सदा] रहे।
ऊर्वोः=जङ्घाओं में	

ओम् अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु ॥ ७ ॥

ओम्=हे प्रभो!	सन्तु=[सदा] रहें
मे=मेरे	मे=मेरा
तन्वाः=शरीर के	तनूः=सारा शरीर [भी]
अङ्गानि=समस्त अङ्ग	सह=साथ [सदा स्वस्थ] रहे।
अरिष्टानि=परिपूर्ण, चोटरहित	

ईश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासना-मन्त्र

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव।
यद् भद्रं तन्न आ सुव॥ १॥ —यजुः० ३०।३

सवितः=हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्ता, समग्र ऐश्वर्ययुक्त!
देव=शुद्धस्वरूप, सब सुखों के दाता परमेश्वर! [आप कृपा करके]
नः=हमारे
विश्वानि=सम्पूर्ण
दुरितानि=दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को
परा सुव=दूर कर दीजिये।
यत्=जो
भद्रम्=कल्याणकारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ [है]
तत्=वह सब, हमको
आ सुव=प्राप्त कराइये।

ओं हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ २॥
—यजुः० १३।४

हिरण्यगर्भः=जो स्वप्रकाशस्वरूप और जिसने प्रकाश करनेवाले सूर्य-चन्द्रमादि पदार्थ उत्पन्न करके धारण किये हैं, जो
भूतस्य=उत्पन्न हुए सम्पूर्ण जगत् का
जातः=प्रसिद्ध
पतिः=स्वामी
एकः=एक ही चेतनस्वरूप
आसीत्=था, जो
अग्रे=सब जगत् के उत्पन्न होने से पूर्व
सम् अवर्त्तत=साथ वर्त्तमान था
सः=वह
इमाम्=इस
पृथिवीम्=भूमि को
उत=और
द्याम्=सूर्य आदि को
दाधार=धारण कर रहा है। हम लोग उस
कस्मै=सुखस्वरूप
देवाय=शुद्ध परमात्मा के लिये
हविषा=ग्रहण करने योग्य योगाभ्यास और अति प्रेम से
विधेम=विशेष भक्ति किया करें।

ओं य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
यस्य छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ ३॥
—यजुः० २५।१३

यः=जो
आत्मदाः=आत्मज्ञान का दाता
बलदाः=शरीर, आत्मा और समाज के बल का देनेवाला
यस्य=जिसकी
विश्वे=सब
देवाः=विद्वान् लोग
उपासते=उपासना करते हैं। और
यस्य=जिसका
प्रशिषम्=प्रत्यक्ष सत्यस्वरूप शासन, न्याय अर्थात् शिक्षा को मानते हैं
यस्य=जिसका
छाया=आश्रय ही
अमृतम्=मोक्षसुखदायक है।
यस्य=जिसका न मानना अर्थात् भक्ति न करना ही
मृत्युः=मृत्यु आदि दुःख का हेतु है, हम लोग उस
कस्मै=सुखस्वरूप
देवाय=सकल ज्ञान के देने वाले परमात्मा की प्राप्ति के लिये
हविषा=आत्मा और अन्तःकरण से
विधेम=भक्ति अर्थात् उसी की आज्ञा का पालन करने में तत्पर रहें।

ओं यः प्राण॒तो नि॑मिष॒तो म॑हि॒त्वैक॒ऽइद्राजा॒ जग॑तो ब॒भूव॑।
य ईशे॒ऽअ॒स्य द्वि॒पद॒श्चतु॑ष्पदः॒ कस्मै॑ दे॒वाय॑ ह॒विषा॑ विधेम॥४॥

—यजुः० २३।३

यः=जो
प्राणतः=प्राण वाले और
निमिषतः=अप्राणिरूप
जगतः=जगत् का
महित्वा=अपने अनन्त महिमा से
एकः इत्=एक ही
राजा=विराजमान राजा
बभूव=है।
यः=जो
अस्य=इस
द्विपदः=मनुष्य आदि और
चतुष्पदः=गौ आदि प्राणियों के शरीरों की
ईशे=रचना करता है, हम लोग उस
कस्मै=सुखस्वरूप
देवाय=सकल ऐश्वर्य के देनेवाले परमात्मा के लिये
हविषा=अपनी सकल उत्तम सामग्री से
विधेम=विशेष भक्ति करें।

ओं येन॒ द्यौरु॒ग्रा पृ॑थि॒वी च॑ दृ॒ढा येन॒ स्व॒ स्तभि॒तं येन॒ नाकः॑।
योऽअ॒न्तरि॑क्षे॒ रज॑सो वि॒मानः॒ कस्मै॑ दे॒वाय॑ ह॒विषा॑ विधेम॥५॥

—यजुः० ३२।६

येन=जिस परमात्मा ने
उग्रा=तीक्ष्ण स्वभाव वाले
द्यौः=सूर्य आदि
च=और
पृथिवी=भूमि को
दृढा=धारण [किया]
येन=जिस जगदीश्वर ने
स्वः=सुख को
स्तभितम्=धारण [किया] और
येन=जिस ईश्वर ने
नाकः=दुःख रहित मोक्ष को [धारण किया है]।
यः=जो
अन्तरिक्षे=आकाश में
रजसः=सब लोकलोकान्तरों को
विमानः=विशेष मानयुक्त अर्थात् जैसे आकाश में पक्षी उड़ते हैं वैसे सब लोकों का निर्माण करता और भ्रमण कराता है, हमलोग उस
कस्मै=सुखदायक
देवाय=कामना करने के योग्य परब्रह्म की प्राप्ति के लिये
हविषा=सब सामर्थ्य से
विधेम=विशेष भक्ति करें।

ओं प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽअस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्॥ ६॥

—ऋ० १०।१२१।१०

प्रजापते!=हे सब प्रजा के स्वामी परमात्मन्!
त्वत्=आपसे
अन्यः=भिन्न दूसरा कोई
ता=उन
एतानि=इन
विश्वा=सब
जातानि=उत्पन्न हुए जड़ चेतनादिकों को
न=नहीं
परि बभूव=तिरस्कार करता है, अर्थात् आप सर्वोपरि हैं।
यत्कामाः=जिस-जिस पदार्थ की कामना वाले हम लोग
ते=आपका
जुहुमः=आश्रय लेवें और वाञ्छा करें।
तत्=उस उस की कामना
नः=हमारी, सिद्ध
अस्तु=होवे। जिससे
वयम्=हम लोग
रयीणाम्=धनैश्वर्यों के
पतयः=स्वामी
स्याम=होवें।

ओं स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा।
यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त॥ ७॥

—यजुः० ३२।१०

हे मनुष्यो!
सः=वह परमात्मा
नः=अपने लोगों का
बन्धुः=भ्राता के समान सुखदायक
जनिता=सकल जगत् का उत्पादक
सः=वह
विधाता=सब कामों को पूर्ण करने वाला
विश्वा=सम्पूर्ण
भुवनानि=लोकमात्र और
धामानि=नाम-स्थान-जन्मों को
वेद=जानता है। और
यत्र=जिस
तृतीये=सांसारिक सुख-दुःख से रहित नित्यानन्दयुक्त
धामन्=मोक्षस्वरूप धारण करने हारे परमात्मा में
अमृतम्=मोक्ष को
आनशानाः=प्राप्त होके
देवाः=विद्वान् लोग
अध्यैरयन्त=स्वेच्छापूर्वक विचरते हैं। वही परमात्मा अपना गुरु, आचार्य, राजा और न्यायाधीश है। अपने लोग मिलके सदा उसकी भक्ति किया करें।

ओ३म्अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम॥ ८॥

—यजुः० ४०।१६

अग्ने=हे स्वप्रकाश ज्ञानस्वरूप सब जगत् के प्रकाश करने वाले
देव=सकल सुखदाता परमेश्वर! आप जिससे
विद्वान्=सम्पूर्ण विद्यायुक्त हैं, कृपा करके
अस्मान्=हम लोगों को
राये=विज्ञान वा राज्यादि ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिये
सुपथा=अच्छे धर्मयुक्त आप्तलोगों के मार्ग से
विश्वानि=सम्पूर्ण
वयुनानि=प्रज्ञान और उत्तम कर्म
नय=प्राप्त कराइये। और
अस्मत्=हम से
जुहुराणम्=कुटिलतायुक्त
एनः=पापरूप कर्म को
युयोधि=दूर कीजिये। इस कारण हम लोग
ते=आपकी
भूयिष्ठाम्=बहुत अधिक
नमउक्तिम्=नम्रतापूर्वक प्रशंसा
विधेम=सदा किया करें और सर्वदा आनन्द में रहें।

—०—

दैनिक-अग्निहोत्र

दीप-प्रज्वालन-मन्त्र

ओं भूर्भुवः स्वः। —गोभिलगृह्य० १।१।११

ओम्=सबको दीप्त करनेवाला ईश्वर [जैसे]
भूः=नित्य सत्तवाला, प्राणाधार
भुवः=ज्ञानवान्, दुःखहर्त्ता [और]
स्वः=सुखस्वरूप और सुखदाता है [वैसे ही दीप-प्रकाश भी प्राणाधार, दुःखहर्त्ता और सुखदाता होवे]

अग्न्याधान-मन्त्र

ओं भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा।
तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे॥

—यजुः० ३।५

ओम्=हे सर्वप्रकाशक ईश्वर!
भूः=आप नित्य प्रकाशस्वरूप
भुवः=दुःखहर्त्ता [और]
स्वः=सुखदाता [हैं]
भूम्ना=महत्ता [की दृष्टि] से
द्यौः इव=द्युलोक के समान [तथा]
वरिम्णा=विस्तार [की दृष्टि] से
पृथिवी इव=पृथिवी के समान [वर्त्तमान]
देवयजनि!=हे दिव्य गुणों का मेल करानेवाली!
पृथिवि!=हे सबको विस्तृत करने वाली [परमात्मारूपी देवि!]
तस्याः ते=उस आपके [और] विस्तृत भूमि के
पृष्ठे=अवलम्बन पर [और] पृष्ठ भाग पर
अन्नादम्=[श्रद्धारूपी या हविरूपी] अन्न ग्रहण करने या खानेवाली
अग्निम्=संकल्प अग्नि को [और] भौतिक अग्नि को
अन्नाद्याय=भक्षणयोग्य अन्न [अथवा आनन्द] के लिये
आ दधे=स्थापित करता हूँ।

अग्नि-प्रदीपन-मन्त्र

ओम् उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते सꣳसृजेथामयं च। अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत॥

—यजुः० १५।५४

ओम्=सर्वरक्षक प्रभु [की कृपा] से
अग्ने=हे प्रगतिशील विद्वज्जन!
उद् बुध्यस्व=उत्तम ज्ञानवान् बनो [और]
प्रति जागृहि=विशेषरूप से जागरूक बनो।
त्वम्=तू
च=और
अयम्=यह [यजमान]
इष्टापूर्त्ते=यज्ञादि तथा अन्य परोपकार के कार्यों को
सम् सृजेथाम्=मिलकर पूरा करो।
अस्मिन्=इस
सधस्थे=[यज्ञशालारूपी] सहस्थान में [और]
उत्तरस्मिन्=[अन्य] श्रेष्ठ स्थान में
विश्वे देवाः=सब विद्वान् जन
च=और
यजमानः=यजमान
अधि सीदत=अच्छी प्रकार बैठ जाओ

समिदाधान-मन्त्र

ओम् अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा॥ इदमग्नये जातवेदसे—इदन्न मम॥ १॥

(इससे पहली समिधा) —आ०गृह्य० १।१०।१२

ओम्=हे सर्वरक्षक
जातवेदः=उत्पन्न और प्रसिद्ध पदार्थों में विद्यमान और उन्हें जाननेवाले हे ईश्वर! तथा यह भौतिक अग्नि
अयम्=यह
इध्मः=श्रद्धारूपी और समिधारूपी इन्धन
ते=तुम्हारा [और इस अग्नि का]
आत्मा=आत्मा=निरन्तर ज्ञान कराने वाला और [सुफल] प्राप्त करानेवाला [है]
तेन=उसके द्वारा
इध्यस्व=प्रदीप्त होओ
च=और
वर्धस्व=बढ़ो (=वृद्धि को प्राप्त होओ) [तथा]
इद्ध=[हमें] प्रकाशित करो [और]
वर्धय=बढ़ाओ
च=और
अस्मान्=हमें
प्रजया=सुशील सन्तानों के द्वारा
पशुभिः=पशुओं के द्वारा
ब्रह्मवर्चसेन=ब्रह्मतेज के द्वारा [और]
अन्नाद्येन=खाने योग्य अन्न के द्वारा
सम् एधय=भलीभाँति बढ़ाओ
स्वाहा=[ऐसा हमारा] उत्तम निवेदन है।
इदम्=यह [श्रद्धानिवेदन और इन्धन]
जातवेदसे=उत्पन्न तथा प्रसिद्ध पदार्थों में व्यापक तथा उनके ज्ञाता—
अग्नये=अग्नि के लिये [है]
इदम्=यह [अब]
मम=मेरा
न=नहीं [है]

ओं स॒मिधा॒ग्निं दु॑वस्यत घृ॒तैर्बो॑धय॒ताति॑थिम्।
आस्मि॑न् ह॒व्या जु॑होतन॒ स्वाहा॑॥ इदमग्नये—इदन्न मम॥ २॥

इससे और

सु॒स॑मिद्धाय शो॒चिषे॑ घृ॒तं ती॒व्रं जु॑होतन।
अ॒ग्नये॑ जा॒तवे॑दसे॒ स्वाहा॑। इदमग्नये जातवेदसे—इदन्न मम॥ ३॥

—यजुः० ३।१-२

—इन दोनों मन्त्रों से दूसरी समिधा

हे यज्ञकर्त्ताओ!
समिधा=समिध् (=इन्धन) के द्वारा
अग्निम्=अग्नि को
दुवस्यत=परिचरित करो (=प्रदीप्त करो)
घृतैः=घृत [आहुतियों] से
अतिथिम्=प्राप्त [अग्नि] को
बोधयत=जागृत करो, चेताओ [फिर]
अस्मिन्=इस अग्नि में
हव्या=उत्तम हवियों को
आ जुहोतन=भलीभाँति होमो (=डालो)।
सुसमिद्धाय=अच्छी प्रकार से प्रदीप्त हुए
शोचिषे=ज्वालायुक्त अग्नि के लिये
तीव्रम्=तपाये हुए पुष्कल
घृतम्=घी को
जुहोतन=होमो (=डालो)
जातवेदसे=उत्पन्न और प्रसिद्ध पदार्थों में व्यापक
अग्नये=अग्नि के लिये
स्वाहा=[समिधा की] उत्तम आहुति है।
इदम्=यह [समिध्-आहुति]
जातवेदसे=उत्पन्न तथा प्रसिद्ध पदार्थों में वर्त्तमान
अग्नये=अग्नि के लिये [है]
इदम्=यह [अब]
मम=मेरी
न=नहीं है।

तं त्वा॑ स॒मिद्भि॑रङ्गिरो घृ॒तेन॑ वर्द्धयामसि। बृ॒हच्छो॑चा यविष्ठ्य॒ स्वाहा॑॥ इदमग्नयेऽङ्गिरसे—इदन्न मम॥ ४॥

—यजुः० ३।३

ओम्=हे सर्वरक्षक-
अङ्गिरः=गतिदाता ईश्वर!
तम्=उस
त्वा=तुझको [तथा सेवनीय इस भौतिक अग्नि को]
घृतेन=स्नेहभाव से तथा घृत [आहुति] से
वर्धयामसि=हम बढ़ाते हैं
यविष्ठ्य=सूक्ष्म करनेवाले हे ईश्वर! [तथा यह अग्नि]

बृहत्=बड़ी मात्रा में
शोच=प्रकाशित होओ [तथा यह अग्नि प्रदीप्त होवे]
स्वाहा=[यह हमारा] उत्तम कथन [है]
इदम्=यह [समिध्-आहुति]
अङ्गिरसे=गतिदाता
अग्नये=अग्नि के लिये [है]
इदम्=यह [अब]
मम=मेरी
न=नहीं [है]

पञ्च-घृताहुति-मन्त्र

ओम् अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा॥ इदमग्नये जातवेदसे—इदन्न मम॥ १॥

—आ०गृह्य० १।१०।१२

इससे पाँच बार घृत की आहुति।

शब्दार्थ पूर्ववत्

जल-सेचन-मन्त्र

ओम् अदितेऽनुमन्यस्व॥ —इससे पूर्व दिशा में
ओम् अनुमतेऽनुमन्यस्व॥ —इससे पश्चिम दिशा में
ओं सरस्वत्यनुमन्यस्व॥ —इससे उत्तर दिशा में

—गोभि० गृह्य० १।३।१-३

ओं देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु॥

—यजुः० ३०।१

अदिते!=हे अखण्डस्वरूप ईश्वर! [आप]
अनु मन्यस्व=[हमें अपने] अनुकूल जानिये।
अनुमते!=हे स्वज्ञान के अनुरूप कर्मोंवाले प्रभो!
अनुमन्यस्व=[हमें अपने] अनुकूल जानिये।
सरस्वति=हे सर्वज्ञानमय प्रभो! [आप]
अनुमन्यस्व=[हमें अपने] अनुरूप ज्ञान दीजिये।
सवितः!=हे प्रेरक
देव=दाता परमात्मन्!
भगाय=ऐश्वर्य के लिये
यज्ञम्=यज्ञभाव को
प्र सुव=प्रेरित करिये
यज्ञपतिम्=यज्ञ के रक्षक को
प्र सुव=प्रेरित करिये
दिव्यः=देवत्व के गुणोंवाला

केतपूः=शरीर और आवास को पवित्र करने वाला
गन्धर्वः=जल तथा सूर्य
नः=हमारे
केतम्=शरीर और आवास को
पुनातु=पवित्र करे

वाचस्पतिः=वाणी का स्वामी अथवा रक्षक विद्वान् और जल
नः=हमारी
वाचम्=वाणी को
स्वदतु=स्वादयुक्त (=मधुर) बनावे।

आघार-आहुति-मन्त्र

ओम् अग्नये स्वाहा॥ १॥ यज्ञकुण्ड की उत्तर भागवाली अग्नि पर घृतसेचन

ओं सोमाय स्वाहा॥ २॥ यज्ञकुण्ड की दक्षिण भागवाली अग्नि पर घृतसेचन

ओम्=सर्वरक्षक-
अग्नये=ज्ञानप्रदाता ईश्वर के लिये और अग्नि के लिये
स्वाहा=उत्तम आहुति [है]

ओम्=सर्वव्यापक-
सोमाय=प्रेरक शान्तिप्रद ईश्वर के लिये और जल के लिये
स्वाहा=उत्तम आहुति [है]।

आज्यभाग-आहुति-मन्त्र

ओं प्रजापतये स्वाहा॥ १॥ यज्ञ कुण्ड के मध्यभाग की अग्नि पर घृताहुति

ओम् इन्द्राय स्वाहा॥ २॥ यज्ञ कुण्ड के मध्यभाग की अग्नि पर घृताहुति

ओम्=सर्वप्रिय-
प्रजापतये=प्रजाओं के पालक ईश्वर के लिये और वायु के लिये
स्वाहा=[यह] उत्तम आहुति है

ओम्=सर्वतृप्तिकारक-
इन्द्राय=ऐश्वर्यदाता ईश्वर के लिये और ऐश्वर्यप्राप्ति के लिये
स्वाहा=[यह] उत्तम आहुति [है]

प्रातःकालीन आहुति-मन्त्र

ओं सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा॥ १॥

—यजुः० ३। ९

ओं सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा॥ २॥

—यजुः० ३। ९

ओं ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ॥ ३ ॥

—यजुः० ३ । ९

ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या।
जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा ॥ ४ ॥ —यजुः० ३ । १०

सूर्यः=सूर्य
ज्योतिः=प्रकाशमय [है]
ज्योतिः=प्रकाशविस्तारक
सूर्यः=[जो] सूर्य [है उसके लिये]
स्वाहा=[यह] उत्तम वचन और आहुति [है] ॥ १ ॥
सूर्यः=सूर्य
वर्चः=दीप्तिमय
ज्योतिः=प्रकाशवान् [है]
वर्चः=दीप्तिविस्तारक [के लिये]
स्वाहा=[यह] उत्तम आहुति [है] ॥ २ ॥
ज्योतिः=ज्योतिःप्रधान
सूर्यः=सूर्य [है]
सूर्यः=सूर्य [ही]
ज्योतिः=[असली] दीप्ति [है, उसके लिये]
स्वाहा=[यह] उत्तम आहुति [है] ॥ ३ ॥
सवित्रा=प्रेरक-
देवेन=देव के
सजूः=साथ [और]
इन्द्रवत्या=ऐश्वर्यवाली-
उषसा=उषावेला के
सजूः=साथ
जुषाणः=सेवन किया जाता हुआ
सूर्यः=सूर्य
वेतु=हमें विशिष्ट रूप में प्राप्त होवे
स्वाहा=[हमारा] निवेदन और हविर्दान [है] ॥ ४ ॥

सायंकालीन-आहुति-मन्त्र

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥ १ ॥

—यजुः० ३ । ९

ओम् अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥ २ ॥

—यजुः० ३ । ९

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥ ३ ॥

—यजुः० ३ । ९

ओम् सजूर्देवेन सवित्रा सजू रात्र्येन्द्रवत्या।
जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा ॥ ४ ॥

—यजुः० ३ । १०

अग्निः=अग्नि
ज्योतिः=प्रकाशमय [है]
ज्योतिः=प्रकाशवान् [जो]
अग्निः=अग्नि [है, उसके लिये]
स्वाहा=[यह] मन्त्रोच्चारण और आहुति [है] ॥ १ ॥
अग्निः=अग्नि
वर्चः=दीप्तिमय [और]
ज्योतिः=प्रकाशवान् [है]
वर्चः=[उस] दीप्तिमान् अग्नि [के लिये]
स्वाहा=[यह] मन्त्रोच्चारण और हवि [है] ॥ २ ॥
अग्निः=सर्वज्ञानमय ईश्वर
ज्योतिः=परमप्रकाशमय [है]
ज्योतिः=परमप्रकाशक
अग्निः=सन्मार्गदर्शक ईश्वर [है, उसके लिये]
स्वाहा=[यह] स्तुतिवचन [है] ॥ ३ ॥
सवित्रा=प्रेरक
देवेन=देव के
सजूः=साथ [और]
इन्द्रवत्या=ऐश्वर्यवती
रात्र्या=रात्रि के
सजूः=साथ
जुषाणः=सेवन किया जाता हुआ
अग्निः=अग्नि
वेतु=हमें प्राप्त होवे [इसीलिये]
स्वाहा=[हमारा] मन्त्रवचन और आहुतिदान है ॥ ४ ॥

प्रातः और सायं दोनों कालों के मन्त्र

ओं भूरग्नये प्राणाय स्वाहा ॥

इदमग्नये प्राणाय—इदन्न मम ॥ १ ॥

भूः=अस्तित्व बनाये रखनेवाले
अग्नये=अग्नि के लिये [और]
प्राणाय=प्राण [धारण] के लिये
स्वाहा=[यह] आहुतिदान [है]
इदम्=यह आहुतिदान
अग्नये=अग्नि के लिये [और]
प्राणाय=प्राण के लिये [है]
इदम्=यह [अब]
मम=मेरा
न=नहीं [है]

ओं भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा ॥

इदं वायवेऽपानाय—इदन्न मम ॥ २ ॥

भुवर्=दुःखनिवारक
वायवे=वायु के लिये [और]
अपानाय=अपान प्राण [के सामर्थ्य के] लिये
स्वाहा=[यह] आहुतिदान [है]
इदम्=यह [आहुति]
वायवे=वायु के लिये [और]
अपानाय=अपान-प्राण-सामर्थ्य के लिये [है]
इदम्=यह [आहुति] [अब]
मम=मेरी
न=नहीं है

ओं स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा॥

इदमादित्याय व्यानाय--इदन्न मम॥ ३॥

स्वः=सुखप्रदाता
आदित्याय=अखण्डस्वरूप ईश्वर और सूर्य के लिये [और]
व्यानाय=व्यान-प्राण-विकास के लिये
स्वाहा=[यह] मन्त्र और आहुति [है]
इदम्=यह [आहुतिदान]
आदित्याय=अखण्ड ईश्वर और सूर्य के लिये [और]
व्यानाय=व्यान-प्राण-विकास के लिये [है]
इदम्=यह [अब]
मम=मेरा
न=नहीं है

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा॥

इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः—इदन्न मम॥ ४॥

भूर् भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः=अस्तित्वरक्षक,दुःखहर्त्ता,सुखदाता अग्नि,वायु,आदित्य के लिए [और]
प्राणापानव्यानेभ्यः=प्राण-अपान-व्यान के लिये
स्वाहा=[यह] आहुतिदान [है]
इदम्=यह [आहुति]
अग्निवाय्वादित्येभ्यः=अग्नि, वायु और आदित्य के लिये [और]
प्राणापानव्यानेभ्यः=प्राण, अपान और व्यान के लिये [है]
इदम्=यह [आहुति] [अब]
मम=मेरी
न=नहीं है।

ओं आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा॥ ५॥

आपः=सर्वव्यापक
ज्योतिः=सर्वप्रकाशमय
रसः=परमस्नेही
अमृतम्=अविनाशी
ब्रह्म=सबसे बड़ा परमेश्वर
भूः=प्राणाधार
भुवः=दुःखहर्त्ता
स्वः=सुखप्रदाता [और]
ओम्=सबका रक्षक और प्रार्थना सुनने वाला [है उसके प्रति]
स्वाहा=[यह] मन्त्र निवेदन [है]

ओं यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।
तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा॥ ६॥

—यजुः० ३०।१४

अग्ने=हे ज्ञानस्वरूप प्रभो!
याम्=जिस-
मेधाम्=धारणावती बुद्धि को
देवगणाः=दिव्यगुणोंवाले विद्वानों के समूह
च=और

पितरः=पालन करे वाले लोग
उपासते=चाहते हैं और प्रयोग में लाते हैं
तया=उस-
मेधया=धारणावती बुद्धि से
माम्=मुझे
अद्य=आज ही
मेधाविनम्=मेधाबुद्धि वाला
कुरु=बना दीजिये [इसीलिये]
स्वाहा=[यह] निवेदन और हविर्दान [है]

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव।
यद् भद्रं तन्न आ सुव॥७॥ —यजुः० ३०।३

सवितः=हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता, समग्र ऐश्वर्ययुक्त
देव=शुद्धस्वरूप, सब सुखों के दाता परमेश्वर! [आप कृपा करके]
नः=हमारे
विश्वानि=सम्पूर्ण
दुरितानि=दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को
परा सुव=दूर कर दीजिये।
यत्=जो
भद्रम्=कल्याणकारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ [है]
तत्=वह सब [हमको]
आ सुव=प्राप्त कराइये॥७॥
स्वाहा=[यह] मेरा निवेदन और हविर्दान है।

ओम् अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम॥८॥ —यजुः० ४०।१६

अग्ने=हे स्वप्रकाश ज्ञानस्वरूप सब जगत् के प्रकाश करनेवाले!
देव=सकल सुखदाता परमेश्वर! [आप जिससे]
विद्वान्=सम्पूर्ण विद्यायुक्त [हैं] [कृपा करके]
अस्मान्=हम लोगों को
राये=विज्ञान वा राज्य आदि ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिये
सुपथा=अच्छे धर्मयुक्त आप्तलोगों के मार्ग से
विश्वानि=सम्पूर्ण
वयुनानि=प्रज्ञान और कर्म
नय=प्राप्त कराइये [और]
अस्मत्=हमसे
जुहुराणम्=कुटिलतायुक्त
एनः=पापरूप कर्म को
युयोधि=दूर कीजिये [इस कारण हम लोग]
ते=आपकी
भूयिष्ठाम्=बहुत अधिक
नमउक्तिम्=नम्रतापूर्वक प्रशंसा
विधेम=सदा किया करें और सर्वदा आनन्द में रहें॥८॥

ओं भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्॥ —यजुः० ३६।३

ओम्=सर्वरक्षक परमेश्वर
भूः=नित्य, प्राणाधार
भुवः=ज्ञानवान्, दुःखहर्त्ता
स्वः=सुखस्वरूप, सुखदाता [है]
तत्=उस सर्वव्यापक
सवितुः=सर्वजगदुत्पादक, प्रेरक
देवस्य=कामना करने योग्य परमात्मा के
वरेण्यम्=अतिश्रेष्ठ
भर्गः=क्लेशनाशक शुद्ध स्वरूप को
धीमहि=हम धारण करें, उसका ध्यान करें।
यः=जो पूजनीय परमेश्वर
नः=हमारी
धियः=बुद्धियों को
प्रचोदयात्=[उत्तम कर्मों में] प्रेरित करे।

ओं सर्वं वै पूर्णं स्वाहा॥

तीन बार बोलकर तीन आहुतियाँ

ओम्=हे सर्वरक्षक ईश्वर! [आपकी कृपा से]
सर्वम्=[मेरा यह] समस्त यज्ञादि कर्म
पूर्णम्=परिपूर्ण सफल [होवे]
स्वाहा=[एतदर्थ] यह निवेदन और आहुति है?

—o—

बृहद्-यज्ञ की आचमन, अङ्गस्पर्श, ईश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासना, स्वस्तिवाचन*, शान्तिकरण*, दैनिक अग्निहोत्र, व्याहृति आहुति*, पवमानाहुति*, अष्टाज्याहुति*, स्विष्टकृदाहुति* तथा पूर्णाहुति इन विधियों में से तारांकित विधियों के मन्त्र नीचे दिये जा रहे हैं।

शेष विधियाँ पूर्ववत् हैं।

बृहद्-यज्ञ के अन्य मन्त्र

स्वस्तिवाचन-मन्त्र

ओ३म् अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्॥ १॥ —ऋ० १।१।१

पुरोहितम्=सबसे पहले आधान योग्य
यज्ञस्य देवम्=यज्ञ के प्रकाशक
ऋत्विजम्=ऋतुओं के सम्पादक
होतारम्=दाता और प्रार्थना को ग्रहण करनेवाले [और]
रत्नधातमम्=रत्नों (=सर्वोत्तम पदार्थों) के सर्वोत्कृष्ट पोषक
अग्निम्=ज्ञानप्रकाशस्वरूप परमेश्वर को
ईडे=मैं बखानता हूँ—उसका वर्णन करता हूँ।

स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव।
सचस्वा नः स्वस्तये॥ २॥ —ऋ० १।१।९

अग्ने=हे प्रकाशस्वरूप प्रभो!
सः=वह तू
सूनवे=पुत्र के लिये
पिता-इव=पिता के समान
नः=हमारे लिये
सूपायनः=सरलता से प्राप्त होने योग्य
भव=होइये।
नः=हम सबको
स्वस्तये=उत्तम अस्तित्व के लिये, कल्याण के लिये
सचस्व=संयुक्त कीजिये।

स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः।
स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना॥ ३॥
—ऋ० ५।५१।११

भगः=भजनीय परमेश्वर
नः=हमारे लिये
अश्विना=दिन-रात, सूर्य-चन्द्र आदि जोड़ों को
स्वस्ति=कल्याणकारी
मिमीताम्=बनावे
देवी=दिव्य गुणवाली
अदितिः=अखण्ड विद्या
अनर्वणः=गति व वाहनरहित का
स्वस्ति=कल्याण [करे]
पूषा=पुष्टिकर्त्ता
असुरः=प्राणदाता वायु
नः=हमारे लिये
स्वस्ति=कल्याण को
दधातु=स्थापित करे [वह प्रभु]
सुचेतुना=उत्तम ज्ञान के [दान के] द्वारा
द्यावापृथिवी=द्युलोक और पृथिवी-लोक को
स्वस्ति=कल्याणयुक्त [करे]।

स्वस्तये वायुमुप ब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः।
बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः॥४॥

—ऋ० ५।५१।१२

स्वस्तये=कल्याण के लिये
वायुम्=गतिदाता प्रभु को और पवन को
उप ब्रवामहै=हम समीप बुलाते हैं और प्राप्त करते हैं।
यः=जो पूजनीय प्रभु
भुवनस्य=ब्रह्माण्ड का
पतिः=पालनकर्त्ता [है, उस]
सोमम्=शान्तिदाता प्रेरक ईश्वर को और चन्द्र [प्रकाश] को
स्वस्ति=कल्याण के लिये हम पुकारते हैं और प्राप्त करते हैं।
सर्वगणम्=समस्त समुदायों वाले-
बृहस्पतिम्=ज्ञान के अधिष्ठाता परमात्मा को और वेदविद्वान् को
स्वस्तये=कल्याण के लिये [हम पुकारते हैं और प्राप्त करते हैं]
आदित्यासः=परिपूर्ण जीवनवाले ज्ञानी लोग
नः=हमारे
स्वस्तये=कल्याण के लिये
भवन्तु=[प्रवृत्त] होवें॥

विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये।
देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः॥५॥

—ऋ० ५।५१।१३

विश्वे=समस्त
देवाः=मुक्तात्मा ज्ञानीजन
अद्य=आज
नः=हमारे
स्वस्तये=कल्याण के लिये
[भवन्तु=प्रवृत्त होवें]
वैश्वानरः=समस्त प्राणियों का मार्गदर्शक
वसुः=सबको बसाने वाला
अग्निः=ज्ञान-गति-दाता ईश्वर
स्वस्तये=[हमारे] कल्याण के लिये
[भवतु=प्रवृत्त होवे]
ऋभवः=बहुत प्रकाशित होने वाले
देवाः=दिव्य ज्ञानी लोग
स्वस्तये=कल्याण के लिये
अवन्तु=[हमारी] रक्षा करें।
रुद्रः=[पाप करने पर] रुलानेवाला ईश्वर
नः=हमें
स्वस्ति=कल्याणकारी रीति से
अंहसः=पाप से
पातु=बचावे, रक्षा करे।

स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति।
स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्ति नो अदिते कृधि॥६॥

—ऋ० ५।५१।१४

मित्रावरुणा=हे स्नेही विद्वानो और न्यायकर्त्ताओ!
नः=हमारा
स्वस्ति=कल्याण [करो]
पथ्ये=हे मार्गहितकारिणि-
रेवति=धनी लोगों की समिति!
स्वस्ति=[हमारा] कल्याण [करो]
इन्द्रः=ऐश्वर्यवान् राजा
च=और
अग्निः=ज्ञानवान् मन्त्री
स्वस्ति=[हमारा] कल्याण [करे]
च=और
अदिते=हे अखंड ज्ञानवती विद्वत्परिषद्।
नः=हमारा
स्वस्ति=कल्याण
कृधि=करो

स्वस्ति पन्थामनु चरेम सूर्याचन्द्रमसाविव।
पुनर्ददताघ्नता जानता सं गमेमहि॥ ७॥ —ऋ० ५।५१।१५

सूर्याचन्द्रमसौ इव=सूर्य और चन्द्रमा के समान [हम]
स्वस्ति=कल्याणमय-
पन्थाम्=मार्ग पर
अनुचरेम=अनुगमन करें, चलें।
पुनः=फिर
ददता=दानी जन [के साथ]
अघ्नता=अहिंसकजन [के साथ] और
जानता=ज्ञानीजन [के साथ]
सं गमेमहि=सङ्गति करें।

ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः।
ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥ ८॥
—ऋ० ७।३५।१५

ये=जो
यज्ञियानाम्=परोपकार आदि यज्ञकर्मों के करने में निपुण-
देवानाम्=विद्वानों के [मध्य में]
यज्ञियाः=यज्ञ-सम्पादन-निपुण
मनोः यजत्राः=मनुष्यमात्र के पूजनीय
अमृताः=अमर (=दीर्घजीवी)
ऋतज्ञाः=सत्य के ज्ञाता विद्वान् [हैं]
ते=वे
अद्य=आज ही
नः=हमे
उरुगायम्=[वेदरूपी] महान् गान को और बहुत धनसम्पत्ति आदि को
रासन्ताम्=प्रदान करें। [हे विद्वानो!]
यूयम्=तुम सब
नः=हमारी
स्वस्तिभिः=कल्याण-कर्मों से
सदा=सर्वदा
पात=रक्षा करो।

येभ्यो माता मधुमत्पिन्वते पयः पीयूषं द्यौरदितिरद्रिबर्हाः।
उक्थशुष्मान् वृषभरान्त्स्वप्नसस्ताँ आदित्याँ अनु मदा स्वस्तये॥ ९॥
—ऋ० १०।६३।३

माता=निर्माण करनेवाली पृथिवी,
द्यौः=द्युलोक [और]
अद्रिबर्हाः=मेघों से भरपूर
अदितिः=अन्तरिक्षलोक
येभ्यः=जिनके लिये
मधुमत्=माधुर्य भरे
पीयूषम्=अमृत समान
पयः=जल [आदि] को
पिन्वते=सिंचित करता है, देता है [हे प्रभो!]
तान्=उन
उक्थशुष्मान्=स्तुति और ज्ञानरूपी बलवाले-
वृषभरान्=शक्ति से भरपूर-
स्वप्नसः=श्रेष्ठ कर्मोंवाले-
आदित्यान्=परिपूर्ण जीवनवाले विद्वानों को
स्वस्तये=[दीर्घकाल तक के] अस्तित्व के लिये, कल्याण के लिये
अनु मद=स्वयं के समान हर्षित करिये

नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा बृहद्देवासो अमृतत्वमानशुः।
ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये॥ १०॥

—ऋ० १०।६३।४

नृचक्षसः=आत्मा का विवेक [दर्शन करनेवाले]-
अनिमिषन्तः=प्रमाद न करने वाले (=वैराग्यवान्)-
अर्हणाः=योग्य, सम्पन्न (=षट्क सम्पत्तिवाले)—[और]
देवासः=दिव्य कामना (=मुक्ति की इच्छा) वाले साधक लोग
बृहद्=महान् (दीर्घ अवधिवाले)
अमृतत्वम्=मोक्ष पद को
आनशुः=प्राप्त करते हैं। [फिर वे]
ज्योतीरथाः=दिव्यज्ञानरूपी प्रकाश में रमण करनेवाले
अहिमायाः=व्यापक बुद्धिवाले [और]
अनागसः=निष्पाप हुए वे मुक्तात्मा
स्वस्तये=कल्याण के लिये
दिवः=दिव्य आनन्द के
वर्ष्माणम्=वर्षक प्रभु में
वसते=रहते हैं

सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययुरपरिह्वृता दधिरे दिवि क्षयम्।
ताँ आ विवास नमसा सुवृक्तिभिर्महो आदित्याँ अदितिं स्वस्तये॥ ११॥

—ऋ० १०।६३।५

[हे मनुष्य!]
ये=जो
सम्राजः=अच्छे प्रकार से दीप्तिमान् [और]
सुवृधः=उत्तम रीति से बढ़नेवाले लोग
यज्ञम्=ध्यान परोपकार आदि यज्ञ को
आययुः=प्राप्त होते हैं [तथा]
अपरिह्वृताः=कुटिलता से रहित [होते हुए]
दिवि=दिव्य सात्त्विक भाव में
क्षयम्=निवास [विद्यमानता] को

दधिरे=करते हैं
तान्=उन
महः=महान् पूजनीय-
आदित्यान्=अखण्ड ज्ञान-कर्म वाले विद्वानों को [और]
अदितिम्=अखण्डस्वरूपा देवमाता ईश्वर को
स्वस्तये=कल्याण के लिये
नमसा=प्रणाम के द्वारा [और]
सुवृक्तिभिः=उत्तम स्तुतियों के द्वारा
आ विवास=सब ओर से सम्मानित करो।

को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ विश्वे देवासो मनुषो यतिष्ठन। को वोऽध्वरं तुविजाता अरं करद्यो नः पर्षदत्यंहः स्वस्तये॥ १२॥ —ऋ० १०।६३।६

प्रश्न—
मनुषः=हे मननशील-
विश्वे देवासः=समस्त विद्वान् लोगो! [आप लोग]
यति=जितने भी
स्थन=हैं [वे विचारें कि]
कः=कौन
वः=तुम्हारे लिये
स्तोमम्=स्तुतिसमूह को (=ज्ञानमय वाणी को)
राधति=सिद्ध करता है, बनाता है?
उत्तर—
यम्=जिसे कि [तुम]
जुजोषथ=बारंबार साक्षात् करते हो [वही]
प्रश्न—
कः=कौन
वः=तुम्हारे
अध्वरम्=हिंसारहित यज्ञ आदि को
अरम्=परिपूर्ण, सुशोभित
करत्=करता है?
उत्तर—
यः=जो
स्वस्तये=कल्याण के लिये
नः=हमें
अंहसः=पाप से
अति पर्षद्=पार (=दूर) पहुँचाता है [वही]

येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्तहोतृभिः। त आदित्या अभयं शर्म यच्छत सुगा नः कर्त सुपथा स्वस्तये॥ १३॥ —ऋ० १०।६३।७

समिद्धाग्निः=प्रदीप्त अग्नि का उत्पादक
मनुः=सर्वज्ञ ईश्वर
येभ्यः=जिनके लिये
प्रथमाम्=विस्तृत
होत्राम्=यज्ञक्रिया को
मनसा=मन के साथ [और]
सप्त होतृभिः=पञ्चप्राण+चित्त+बुद्धि इन सात होताओं के साथ
आयेजे=[वेदज्ञान द्वारा] प्रदान

करता है।
ते=वे
आदित्याः=परिपूर्ण ज्ञान-कर्मवाले लोगो! [आप हमें]
अभयम्=भयरहित
शर्म=सुख को
यच्छत=प्रदान करिये [और]
नः=हमारे
स्वस्तये=कल्याण के लिये
सुपथा=उत्तम [जीवन] मार्गों को
सुगा=सुगम
कर्ता=कीजिये

य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः।
ते नः कृतादकृतादेनसस्पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये॥ १४॥

—ऋ० १०।६३।८

ये=जो
प्रचेतसः=विशेष चेतना वाले
मन्तवः=ज्ञानवान् विद्वान् जन
विश्वस्य=समस्त
स्थातुः=जड़
च=और
जगतः=चेतन
भुवनस्य=संसार के
ईशिरे=ऐश्वर्यवर्द्धक हैं
ते=वे
देवासः=[आप] दिव्य आत्माओ!
स्वस्तये=कल्याण के लिये
नः=हमें
कृतात्=किये हुए [और]
अकृतात्=न किये हुए
एनसः=पापकर्म से
अद्य=आज ही
परि पिपृत=पार कर दीजिये, दूर कर दीजिये।

भरेष्विन्द्रं सुहवं हवामहेऽहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम्।
अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये॥ १५॥

—ऋ० १०।६३।९

[हम लोग]
भरेषु=संग्रामों-संघर्षों में
सातये=ठीक-ठीक विभाग के लिये [और]
स्वस्तये=कल्याण के लिये
सुहवम्=सरलता से पुकार सुननेवाले
इन्द्रम्=राजा को
अंहोमुचम्=पाप से छुड़ाने वाले-
सुकृतम्=शुभ-कर्म करने वाले-
दैव्यम्=दिव्य गुण धारी-
जनम्=मनुष्य को
अग्निम्=सन्मार्गदर्शक नेता को
मित्रम्=स्नेहीजन को
वरुणम्=न्यायाधीश को
भगम्=ऐश्वर्यशाली मनुष्य को
द्यावापृथिवी=द्युलोक और पृथिवीलोक [में विचरने वाले दिव्य आत्माओं] को [और]
मरुतः=तीव्र संवेग वाले वीरों को
हवामहे=पुकारते हैं।

सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम्।
दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये॥ १६॥

—ऋ० १०।६३।१०

[हम लोग]
स्वस्तये=कल्याण के लिये
सुत्रामाणम्=रक्षा-साधनों से युक्त-
पृथिवीम्=विस्तृत (=विशाल)-
द्याम्=प्रकाशयुक्त-
अनेहसम्=विकाररहित-
सुशर्माणम्=उत्तम सुखदायिनी-
अदितिम्=अखण्ड-
सुप्रणीतिम्=अच्छे प्रकार से निर्मित
स्वरित्राम्=गति-प्रेरणा देने वाले साधनों (जनों) से युक्त-
अनागसम्=दोषरहित-
अस्रवन्तीम्=डगमग न करने वाली (=टिकाऊ)
दैवीम्=दिव्य गुणों वाली-
नावम्=[जीवनरूपी] नौका को [नौका पर]
आ रुहेम=आरूढ़ होवें-चढ़ें

विश्वे यजत्रा अधि वोचतोतये त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिहुतः।
सत्यया वो देवहूत्या हुवेम शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये॥ १७॥

—ऋ० १०।६३।११

विश्वे=हे समस्त-
यजत्राः=पूजनीय आत्माओ!
ऊतये=रक्षा और प्रगति के लिये
अधि वोचत=[हमें] अधिकार-पूर्वक उपदेश करिये [और]
नः=हमें
अभिहुतः=कुटिलता वाली-
दुरेवायाः=दुर्गति से, आपत्ति से
त्रायध्वम्=बचाइये।
देवाः=हे दिव्य आत्माओ!
शृण्वतः=पुकार सुनने वाले-
वः=आप लोगों को
सत्यया=सच्ची-(वास्तविक)
देवहूत्या=दिव्य स्तुति के द्वारा
अवसे=[हमारी] रक्षा के लिये [और]
स्वस्तये=कल्याण के लिये
हुवेम=हम पुकारते हैं।

अपामीवामप विश्वामनाहुतिमपारातिं दुर्विदत्रामघायतः।
आरे देवा द्वेषो अस्मद्युयोतनोरु णः शर्म यच्छता स्वस्तये॥ १८॥

—ऋ० १०।६३।१२

देवाः!=हे दिव्य आत्माओ!
अमीवाम्=रोग को [हमसे]
अप=दूर [कर दो।]
विश्वाम्=समस्त-
अनाहुतिम्=आहुति न देने की क्रिया को
अप=दूर कर दो।
अरातिम्=अदानभाव, कंजूसी [और]
अघायतः=पाप की कामना करने वाले की

दुर्विदत्राम्=उल्टी समझ को, दुष्ट बुद्धि को
अप=दूर कर दो।
द्वेषः=द्वेषभावों को
अस्मत्=हमसे
युयोतन=हटा दो [और]
स्वस्तये=कल्याण के लिये
नः=हमें
उरु=बहुत
शर्म=सुख
यच्छत=प्रदान करो।

अरिष्टः स मर्तो विश्व एधते प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि।
यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरति विश्वानि दुरिता स्वस्तये॥ १९॥

—ऋ० १०।६३।१३

आदित्यासः!=हे अखण्ड (=पूर्ण) जीवन वाले आत्माओ! [आप लोग]
यम्=जिस मनुष्य को
सुनीतिभिः=उत्तम नीतियों के द्वारा
नयथ=चलाते हो, मार्गदर्शन करते हो [और]
स्वस्तये=कल्याण के लिये [उसके]
विश्वानि=समस्त-
दुरिता=दुर्गुणों और दुर्व्यसनों को
अति=दूर कर देते हो
सः=वह
विश्वः=सम्पूर्ण
मर्त्तः=मनुष्य
अरिष्टः=कष्ट और परेशानियों से रहित [होकर]
एधते=वृद्धि को प्राप्त होता है [और]
धर्मणः=धर्माचरण के कारण
परि=सब ओर
प्रजाभिः=संस्कारी सन्तानों के साथ
प्र जायते=प्रसिद्धि को प्राप्त होता है।

यं देवासोऽवथ वाजसातौ यं शूरसाता मरुतो हिते धने।
प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानसिमरिष्यन्तमा रुहेमा स्वस्तये॥ २०॥

—ऋ० १०।६३।१४

देवासः=हे दिव्यजनो! [आप लोग]
वाजसातौ=वेग की समीक्षा में
यम्=जिस [जीवन-रथ] को
अवथ=रक्षित करते हो [और]
मरुतः!=हे तीव्र संवेग वाले वीरो!
हिते=हितकारी-
धने=धन के निमित्त
शूरसाता=संग्राम में
यम्=जिसे [रक्षित करते हो]
इन्द्र=हे ऐश्वर्यवान् ईश्वर तथा राजन्! [उस]
प्रातर्यावाणम्=प्रातःकाल (=बचपन) से ही [लक्ष्य] प्राप्त कराने वाले
सानसिम्=[धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष के] विभाग से युक्त-

अरिष्यन्तम्=कष्टों से रहित-
रथम्=[जीवनरूपी] रथ पर
स्वस्तये=कल्याण के लिये [हम]
आ रुहेम=आरूढ़, सवार होवें।

स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु स्वस्त्यप्सु वृजने स्ववति।
स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु स्वस्ति राये मरुतो दधातन॥ २१॥

—ऋ० १०।६३।१५

मरुतः!=हे तीव्र संवेगी ज्ञानी आत्माओ! [आप लोग]
नः=हमारे लिये
पथ्यासु=मार्ग वाले प्रदेशों में [और]
धन्वसु=मरुप्रदेशों में
स्वस्ति=कल्याण
दधातन=स्थापित कीजिये।
अप्सु=[पृथिवीस्थ] जलों में [और]
स्ववति=[वाष्परूप] जल वाले-
वृजने=अन्तरिक्ष में
स्वस्ति=कल्याण [स्थापित करिये]
नः=हमारे समाज के
पुत्रकृथेषु=पुत्रपुत्री उत्पन्न करने वाले-
योनिषु=गर्भाशयों में
स्वस्ति=कल्याण [स्थापित कीजिये] और
राये=ऐश्वर्य-प्राप्ति के लिये
स्वस्ति=कल्याण
[दधातन=स्थापित कीजिये]।

स्वस्तिरिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा रेक्णस्वत्यभि या वाममेति।
सा नो अमा सो अरणे नि पातु स्वावेशा भवतु देवगोपा॥ २२॥

—ऋ० १०।६३।१६

या=जो
प्रपथे=प्रगति के मार्ग में
श्रेष्ठा=अत्युत्तम [और]
रेक्णस्वती=धन [उत्पन्न] करने वाली
स्वस्तिः=उत्तम अस्तित्व की क्रिया
इत् हि=निश्चय ही
वामम्=प्रशंसनीय पदार्थसमूह को
अभि एति=प्राप्त कराती है।
सा=वह अस्तित्वरक्षिणी क्रिया
अमा=घर में
उ=और
सा=वह
अरणे=जङ्गल में
नः=हमें
नि पातु=नियत रूप से बचावे (=रक्षा करे) [और]
देवगोपा=दिव्य भावों के द्वारा रक्षित [वह स्वस्ति]
स्वावेशा=उत्तम उपलब्धियों में प्रवेश कराने वाली
भवतु=होवे।

इषे त्वोर्जे त्वा वायवं स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मणऽआप्यायध्वमघ्न्याऽइन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवाऽअयक्ष्मा मा व स्तेनऽईशत माघशंसो ध्रुवाऽअस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि॥ २३ ॥

—यजुः० १।१

इषे=अन्न और ज्ञान के लिये
त्वा=सेवनीय तुझ परमात्मा को
ऊर्जे=बल और प्राण के लिये
त्वा=तुझ परमात्मा को [हम स्मरण करते हैं] [हे जीवो! तुम]
वायवः=प्रगतिशील
स्थ=हो
सविता=सर्वजगदुत्पादक, प्रेरक
देवः=दाता परमेश्वर
वः=तुम्हें
श्रेष्ठतमाय=अत्यन्त श्रेष्ठ
कर्मणे=कर्म के लिये
प्र अर्पयतु=प्रगतिमान् करे।
अघ्न्याः!=हे न मारने योग्य प्रजाओ! [तुम]
प्रजावतीः=उत्तम सन्तानों वाली-
अनमीवाः=रोगरहित [और]
अयक्ष्माः=महारोगों से रहित [रहती हुईं]
इन्द्राय=समर्थ राजा के लिये
भागम्=भाग को (=देय अंश को)
आप्यायध्वम्=बढ़ाओ (=आगे होकर देओ)
वः=तुम्हारे ऊपर
स्तेनः=चोर तस्कर
मा=मत
ईशत=शासन करे
अघशंसः=पापों की प्रशंसा करने वाला
मा=मत [शासन करे] [हे प्रजाजनो!] तुम
अस्मिन्=इस-
गोपतौ=भूपति राजा के अधीन
ध्रुवाः=स्थायी निवास वाली [और]
बह्वीः=बहुत संख्या वाली
स्यात=होओ।
[हे राजन्!] तू
यजमानस्य=प्रत्येक यज्ञ करने वाले मनुष्य के
पशून्=पशुओं को
पाहि=रक्षित कर, उनकी रक्षा कर।

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासोऽअपरीतासऽउद्भिदः। देवा नो यथा सदमिद्वृधेऽअसन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवेदिवे॥ २४॥

—यजुः० २५।१४

भद्राः=कल्याणकारी
क्रतवः=ज्ञान और कर्म
विश्वतः=सब ओर से
नः=हमें
आ यन्तु=भली-भाँति प्राप्त हों
यथा=जिससे कि

अदब्धासः=न दबने वाले-
अपरीतासः=[धर्म से] विपरीत न चलने वाले
उद्भिदः=विघ्नों से पार होने वाले
अप्रायुवः=प्रमाद न करने वाले
दिवे दिवे=प्रतिदिन
रक्षितारः=रक्षा करने वाले
देवाः=विद्वान् लोग
सदम् इत्=सर्वदा ही
नः=हमारी
वृधे=वृद्धि के लिये
असन्=[प्रयत्नशील] होवें।

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाᳬं रातिरभि नो निवर्त्तताम्।
देवानाᳬं सख्यमुपसेदिमा वयं देवा नऽआयुः प्रतिरन्तु जीवसे॥ २५॥

—यजुः० २५।१५

ऋजूयताम्=सरल व्यवहार वाले-
देवानाम्=विद्वानों की
भद्रा=कल्याणकारिणी
सुमतिः=उत्तम बुद्धि [और]
देवानाम्=दाताजनों का
रातिः=दान
नः अभि=हमारी ओर अभिमुख होकर
नि वर्त्तताम्=नियतरूप से वर्त्तमान रहें (=हमारे लिये सुलभ रहें)
वयम्=हम सब
देवानाम्=दिव्य गुणवाले आत्माओं के, विद्वानों के
सख्यम्=मित्रभाव को
उप सेदिम=समीपता से प्राप्त होवें
देवाः=दिव्य जन तथा दिव्य पदार्थ
नः=हमारी
आयुः=आयु को
जीवसे=जीने के लिये
प्र तिरन्तु=खूब बढ़ावें।

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम्।
पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये॥ २६॥

—यजुः० २५।१८

जगतः=चेतन संसार के [और]
तस्थुषः=जड़ संसार के
पतिम्=स्वामी-[तथा]
धियञ्जिन्वम्=बुद्धियों को तृप्त करने वाले-
तम्=उस
ईशानम्=परमेश्वर को
वयम्=हम सब
अवसे=रक्षा के लिये
हूमहे=पुकारते हैं।
यथा=जिससे कि
पूषा=पुष्टिकर्त्ता
रक्षिता=रक्षा करने वाला
पायुः=पालन करने वाला
अदब्धः=न दबने वाला (=सबसे ऊपर) वह परमेश्वर
नः=हमारे
स्वस्तये=कल्याण के लिये [और]

वेदसाम्=धनों की
वृधे=वृद्धि के लिये
असत्=[प्रयत्नशील] होवे।

स्वस्ति नऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥ २७॥
—यजुः० २५।१९

वृद्धश्रवाः=बढ़े हुए धन [कोष] वाला
इन्द्रः=राजा
नः=हमारे लिये
स्वस्ति=कल्याण
दधातु=स्थापित करे।
विश्ववेदाः=सम्पूर्ण धन वाला
पूषा=पुष्टिकर्त्ता वैश्यजन
नः=हमारे लिये
स्वस्ति=कल्याण [स्थापित करे]
अरिष्टनेमिः=बाधारहित [लक्ष्य-] प्राप्ति वाला
तार्क्ष्यः=निरन्तर गतिशील कर्मकारी
नः=हमारे लिये
स्वस्ति=कल्याण [स्थापित करे] और
बृहस्पतिः=ज्ञानमय वाणी का स्वामी (=महा विद्वान्)
नः=हमारे लिये
स्वस्ति=कल्याण [स्थापित करे]।

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः॥ २८॥
—यजुः० २५।२१

यजत्राः!=[हे] पूजनीय-
देवाः!=दिव्य आत्माओ! [हम]
कर्णेभिः=कानों से
भद्रम्=कल्याणकारी वचन
शृणुयाम=सुनें।
अक्षभिः=नेत्रों से
भद्रम्=शुभ
पश्येम=देखें।
तुष्टुवांसः=स्तुति करते हुए [हम]
स्थिरैः=दृढ-
अङ्गैः=[बाहू आदि] अङ्गों के साथ [और]
तनूभिः=स्थूल, सूक्ष्म एवं गुणरूप शरीरों के साथ
यत्=जो
देवहितम्=देवों के योग्य (=श्रेष्ठ)
आयुः=आयु [है, उसे]
व्यशेमहि=विशेषरूप से प्राप्त करें।

अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये।
नि होता सत्सि बर्हिषि॥ २९॥ —साम०पू० १।१।१

अग्ने!=हे आगे ले जाने वाले प्रभो!
गृणानः=स्तुति किये जाते हुए आप
वीतये=विशेष प्रगति के लिये [और]
हव्यदातये=हवि का दान करने के लिये
आ याहि=हमें प्राप्त होओ (=ध्यान में आओ)
होता=[और] आनन्ददाता [होकर]
बर्हिषि=[हृदयरूपी] आसन पर
नि सत्सि=नियमितरूप से विराजिये।

१ २ ३ २ ३ २ ३ १ २ ३ २
त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः।
३ २ ३ १ २ ३ १ २
देवेभिर्मानुषे जने॥ ३०॥ —साम० पू० १।१।२

अग्ने=हे ज्ञानमय प्रभो!
त्वम्=आप
मानुषे=मननशील-
जने=जनसमुदाय में
देवेभिः=दिव्य भावों और आत्माओं के द्वारा
विश्वेषाम्=समस्त
यज्ञानाम्=देवभक्ति, संगति और दान कर्मों के
होता=आधान करने वाले [और]
हितः=[उनका] हित करने वाले [हैं]।

ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः।
वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे॥ ३१॥
—अथर्व० १।१।१

ये=जो
विश्वा=समस्त
रूपाणि=रूपों को [रूप वाले पदार्थों को]
बिभ्रतः=पुष्ट करते हुए
त्रिषप्ताः=[दुःख से] तारने में समवेत (=लगे हुए) [महान् आत्मा]
परि यन्ति=सब ओर विचरते हैं
तेषाम्=उनके
तन्वः=शरीर के [सदृश]
बला=बलों को, [परमेश्वर]
मे=मेरे [शरीर में]
अद्य=आज ही
दधातु=स्थापित करे।

इति स्वस्तिवाचनम्

शान्तिकरण-मन्त्र

ओ३म्

शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या।
शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ॥ १॥
—ऋ० ७।३५।१

इन्द्राग्नी=परम ऐश्वर्यशाली ईश्वर और अव्याहतगति मुक्तात्मा
अवोभिः=रक्षाओं द्वारा
नः=हमारे लिये
शम्=सुखमय शान्ति करने वाले
भवताम्=होवें,
रातहव्या=आनन्ददाता-
इन्द्रावरुणा=ईश्वर और जीवन्मुक्त योगी
नः=हमारे लिये
शम्=सुखशान्तिदायी [होवें]
इन्द्रासोमा=योगैश्वर्यवान् परमात्मा और शान्तचित्त योगी
[नः=हमारी]
शम् योः=रोगों के शमन और भयनिवारण में
सुविताय=उत्तम गति के लिये
शम्=शान्तिकारक [होवें]
वाजसातौ=ज्ञान-प्राप्ति के समय में
इन्द्रापूषणा=ज्ञानैश्वर्यवान् अध्यापक और पुष्टि (=तृप्ति) कर्त्ता उपदेशक
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिदायी होवें।

शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शं नः पुरन्धिः शमु सन्तु रायः।
शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु॥ २॥
—ऋ० ७।३५।२

भगः=धार्मिक और यशस्वी मनुष्य
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिकारक [होवे]
उ=और
शंसः=प्रशंसक मनुष्य
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिदायी [होवे]
पुरन्धिः=विशाल बुद्धि
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिदात्री [होवे]
रायः=धन-सम्पत्तियाँ
उ=भी
शम्=शान्तिकारक
सन्तु=होवें।
सुयमस्य=उत्तम आत्मनियन्त्रण से युक्त-
सत्यस्य=सत्याचरण की
शंसः=प्रशंसा करने वाला
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिदाता [होवे],
पुरुजातः=बहुत प्रसिद्ध
अर्यमा=शत्रुनिवारक सेनाधिकारी और पुलिस
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिकारक
अस्तु=होवे।

शं नो धाता शमु धर्ता नो अस्तु शं न उरूची भवतु स्वधाभिः।
शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु॥ ३॥
—ऋ० ७।३५।३

धाता=भवनादि का निर्माता
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिदायक [होवे]
उ=तथा
धर्त्ता=व्यवस्था करने वाला
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिस्थापक
अस्तु=होवे
उरूची=बहुत सत्कार करने वाली गृहस्वामिनी
स्वधाभिः=अन्नों के द्वारा
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिदायिनी
भवतु=होवे।
बृहती=विशाल
रोदसी=[भवन की] ऊपरी और नीचे की मंजिल अथवा छत और फर्श
शम्=शान्तिमय [होवें]
अद्रिः=आदर करने वाला
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिकारक [होवे]
देवानाम्=विद्वानों के [प्रति किये गये]
सुहवानि=प्रेमभरे निमन्त्रण
नः=हमारे लिये
शम्=सुखदायी
सन्तु=होवें।

शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम्।
शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभि वातु वातः॥ ४॥
—ऋ० ७।३५।४

ज्योतिरनीकः=प्रकाशरूपी बल और स्वरूप वाला-
अग्निः=अग्नि
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिकारक
अस्तु=होवे
मित्रावरुणा=स्नेही आचार्य और [शुद्धाशुद्ध-निरीक्षक] परीक्षक
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिदायी [होवें]
अश्विना=दिन और रात्रि
शम्=शान्तियुक्त [होवें]
सुकृताम्=शुभ कर्म करनेवालों के
सुकृतानि=शुभ कर्म
नः=हमारे लिये
शम्=सुखदायी
सन्तु=होवें
इषिरः=गतिशील
वातः=वायु
नः=हमारे
अभि=दोनों ओर
शम्=शान्ति के लिये
वातु=बहे।

शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु।
शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः ॥ ५ ॥

—ऋ० ७।३५।५

पूर्वहूतौ=प्रथम-स्तुति-समय (=उषावेला) में
द्यावापृथिवी=द्युलोक और पृथिवीलोक
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिमय [होवें]
अन्तरिक्षम्=अन्तरिक्षलोक
नः=हमारे
दृशये=दर्शन के लिये
शम्=शान्तियुक्त
अस्तु=होवे
ओषधीः=ओषधियाँ [और]
वनिनः=वृक्ष
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिकारक
भवन्तु=होवें
रजसः पतिः=अनेक लोगों का स्वामी-
जिष्णुः=विजयकर्त्ता मनुष्य
नः=हमारे लिये
शम्=शान्ति लाने वाला
अस्तु=होवे

शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः।
शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः शं नस्त्वष्टा ग्नाभिरिह शृणोतु ॥ ६ ॥

—ऋ० ७।३५।६

देवः=प्रकाशदाता
इन्द्रः=विद्युदग्नि
वसुभिः=अन्धकार हरने वाले प्रकाशों के द्वारा
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिकारक
अस्तु=होवे
सुशंसः=उत्तम प्रशंसनीय
वरुणः=संवत्सर
आदित्येभिः=मासों के साथ
शम्=शान्तिदायी [होवे]
जलाषः=जलादि से रोग हरनेवाला
रुद्रः=वैद्य
रुद्रेभिः=अन्य वैद्यों के साथ
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिदाता [होवे]
त्वष्टा=शल्यचिकित्सक (=सर्जन)
ग्नाभिः=परिचारिकाओं (=नर्सों) के साथ
नः=हमें (=हमारी व्यथा को)
शम्=शान्तिपूर्वक
शृणोतु=सुने।

शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः।
शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शं नः प्रस्वः शम्वस्तु वेदिः ॥ ७ ॥

—ऋ० ७।३५।७

सोमः=सोमौषधि-प्रधान होम-द्रव्य
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिकारक
भवतु=होवे
ब्रह्म=वेद
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिस्थापक [होवे]
ग्रावाणः=मन्त्रोच्चारण करने वाले
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिदाता [होवें]
उ=और
यज्ञाः=यज्ञकर्म भी
शम्=शान्तिदायक
सन्तु=होवें

स्वरूणाम्=यज्ञिय स्तम्भ आदि के
मितयः=ज्ञान तथा माप
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिकारक
भवन्तु=होवें
प्रस्वः=उत्तम सुगन्ध उत्पादक आहुतियाँ
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिविस्तारक [होवें]
उ=और
वेदिः=यज्ञवेदी
शम्=शान्तियुक्त
अस्तु=होवे।

शं न सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्त्रः प्रदिशो भवन्तु।
शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः ॥ ८ ॥

—ऋ० ७।३५।८

उरुचक्षाः=विस्तृत दर्शन का हेतु
सूर्यः=[मध्याह्न का] सूर्य
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तियुक्त [होकर]
उत् एतु=ऊपर की दिशा को प्राप्त होवे
चतस्त्रः=चारों
प्रदिशः=दिशाएँ
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तियुक्त
भवन्तु=होवें।
ध्रुवयः=स्थिर अवस्था वाले

पर्वताः=पर्वत
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिमय
भवन्तु=होवें।
सिन्धवः=नदियाँ
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिमय [होवें]
उ=और
आपः=जल
शम्=शान्तियुक्त
सन्तु=होवें।

शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः।
शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः ॥ ९ ॥

—ऋ० ७।३५।९

अदितिः=अखण्ड स्नेहशीला माता
व्रतेभिः=सुतपालन, पातिव्रत्य आदि व्रतों के द्वारा
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिदायिनी
भवतु=होवे
स्वर्काः=उत्तम सत्कार के पात्र
मरुतः=वीर मनुष्य
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिकारी
भवन्तु=होवें।
विष्णुः=व्यापक यश वाला राजा
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिकारक [होवे]
पूषा=पुष्टिकर्त्ता जन
उ=भी
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिदायक
अस्तु=होवे
भवित्रम्=भविष्यत् काल
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिमय [होवे]
उ=और
वायुः=जीवात्मा
शम्=शान्तियुक्त
अस्तु=होवे।

शं नो॑ दे॒वः स॑वि॒ता त्राय॑माण॒ः शं नो॑ भवन्तू॒षसो॑ विभा॒तीः।
शं नः॑ प॒र्जन्यो॑ भवतु प्र॒जाभ्य॒ः शं न॒ः क्षेत्र॑स्य॒ पति॑रस्तु श॒म्भुः ॥ १० ॥
—ऋ० ७।३५।१०

त्रायमाणः=[अन्धकार आदि से] रक्षा करने वाला-
देवः=प्रकाशदाता
सविता=उदीयमान सूर्य
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिकारक [होवे]
विभातीः=विशेष सुनहले प्रकाश वाली
उषसः=उषावेलाएँ
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिदायिनी
भवन्तु=होवें।
पर्जन्यः=जल से पूर्ण मेघ
नः=हमारी
प्रजाभ्यः=प्रजाओं के लिये
शम्=शान्तिकारक
भवतु=होवे
क्षेत्रस्य पतिः=पृथिवीक्षेत्र का पालनकर्त्ता
शम्भुः=शान्त (=अप्रकट) स्वरूप वाला अग्नि
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तियुक्त
अस्तु=होवे।

शं नो॑ दे॒वा वि॒श्वदे॑वा भवन्तु॒ शं सर॑स्वती स॒ह धी॒भिर॑स्तु। शम॑भि॒षाच॒ः शमु॑ राति॒षाच॒ः शं नो॑ दि॒व्याः पार्थि॑वा॒ः शं नो॒ अप्याः॑ ॥ ११ ॥ —ऋ० ७।३५।११

विश्वदेवाः=सम्पूर्ण जगत् के द्वारा प्रशंसित
देवाः=विद्वान् लोग
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिसुखदाता
भवन्तु=होवें
सरस्वती=ज्ञानवती विदुषी स्त्री और विद्या
धीभिः=बुद्धियों के
सह=साथ
शम्=शान्तदायिनी
अस्तु=होवे।
अभिषाचः=निकट व दूर के संबंधी
शम्=शान्तिदायी [होवें]
उ=और
रातिषाचः=दानभाव से परिपूर्ण जन
शम्=शान्तिकारक [होवें]
दिव्याः=द्युलोक में वर्त्तमान पदार्थ [और]
पार्थिवाः=पृथिवी के पदार्थ
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिमय [होवें]
अप्याः=अन्तरिक्ष में स्थित पदार्थ
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिदायक [होवें]।

शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः।
शं न ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः शं नो भवन्तु पितरो हवेषु॥ १२॥

—ऋ० ७।३५।१२

सत्यस्य=सत्य के
पतयः=पालन करने वाले
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिकारक
भवन्तु=होवें
अर्वन्तः=तेज घोड़े
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिमय [होवें]
उ=और
गावः=गौएँ
शम्=शान्तिदायिनी
सन्तु=होवें।
सुकृतः=शुभ कर्म करने वाले
सुहस्ताः=उत्तम हाथ आदि अंगों वाले
ऋभवः=तेजस्वी लोग
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिसुखदाता [होवें]
पितरः=पालनकर्त्ता बुजुर्ग लोग
हवेषु=पुकारों में (=प्रत्येक निवेदन पर)
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिप्रदाता
भवन्तु=होवें।

शं नो अज एकपाद्देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः।
शं नो अपां नपात्पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपा॥ १३॥

—ऋ० ७।३५।१३

एकपाद्=एक से स्वरूप वाला (साम्यावस्था वाला)
अजः=सर्वत्र वर्त्तमान एवं अजन्मा
देवः=दिव्य सामर्थ्यवाला प्रकृतिरूपी पदार्थ
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिमय
अस्तु=होवे
बुध्न्यः=आकाश में निर्मित
अहिः=व्यास [महत्तत्त्व]
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तियुक्त [होवे]
समुद्रः=रसतन्मात्रा रूप समुद्र
शम्=शान्तियुक्त [होवे]।
अपां नपात्=जलों को न गिरने देने वाला
पेरुः=पान का हेतु सूक्ष्म मेघ
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तियुक्त
अस्तु=होवे
देवगोपा=जड़-चेतन सब व्यवहारों की आधाररूपी
पृश्निः=सृष्टि
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिदायिनी
भवतु=होवे।

इन्द्रो विश्वस्य राजति।
शन्नोऽअस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे॥ १४॥ —यजुः० ३६।८

[यः=जो]
इन्द्रः=ऐश्वर्यवान् परमात्मा
विश्वस्य=सम्पूर्ण जगत् के [अन्दर]
राजति=प्रकाश करता है [वह]
नः=हमारे
द्विपदे=दो पाँव वालों के लिये
शम्=शान्तिकारक
अस्तु=होवे [और]
चतुष्पदे=चौपायों के लिये
शम्=शान्तिकारक [होवे]

शन्नो वातः पवताᳪं शन्नस्तपतु सूर्य्यः।
शन्नः कनिक्रदद् देवः पर्जन्योऽअभि वर्षतु॥ १५॥
—यजुः० ३६।१०

वातः=वायु
नः=हमारे लिये
शम्=शान्त [होकर]
पवताम्=बहे
सूर्यः=सूर्य
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिमय [होकर]
तपतु=तपे।
देवः=जलदाता
पर्जन्यः=मेघ
कनिक्रदद्=कड़-कड़ शब्द करता हुआ
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तियुक्त
अभि वर्षतु=यथासमय बरसे।

अहा॑नि॒ शम्भव॑न्तु नः॒ शꣳ रात्री॒ः प्रति॑ धीयताम्।
शन्न॑ इन्द्रा॒ग्नी भ॑वता॒मवो॑भि॒ः शन्न॒ऽइन्द्रा॒वरु॑णा रा॒तह॑व्या।
शन्न॑ इन्द्रापू॒षणा॒ वाज॑साता॒ै शमिन्द्रा॒सोमा॑ सुवि॒ताय॒ शं योः॥ १६॥

—यजुः० ३६।११

अहानि=दिन
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तियुक्त
भवन्तु=होवें
रात्रीः=रात्रियाँ
शम्=शान्ति को
प्रति धीयताम्=धारण करें।
इन्द्राग्नी=परमेश्वर और मुक्तात्मा
अवोभिः=रक्षाओं के द्वारा
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिदाता
भवताम्=होवें।
रातहव्या=आनन्ददाता
इन्द्रावरुणा=परमेश्वर और जीवन्मुक्त योगी
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिदायक [होवें]
इन्द्रापूषणा=अध्यापक और उपदेशक
वाजसातौ=ज्ञान-प्राप्ति के समय में
नः=हमारे लिये
शम्=शान्तिमय [होवें]
इन्द्रासोमा=योगैश्वर्यवान् प्रभु और शान्तचित्त योगी
सुविताय=उत्तम गति के लिये
शं योः=रोगशमन और भयनिवारण के समय में
शम्=शान्तिकारक [होवें]

शन्नो॑ दे॒वीर॒भिष्ट॑य॒ऽआपो॑ भवन्तु पी॒तये॑।
शं योर॒भिस्र॑वन्तु नः॥ १७॥

—यजुः० ३६।१२

देवीः=दिव्य गुणों से युक्त
आपः=परमेश्वरजी तथा जल आदि
नः=हमारे
अभिष्टये=अभीष्ट (=सांसारिक) सुख के लिये [और]
पीतये=पूर्णानन्द [=मुक्तिसुख] के लिये
शम्=शान्तिदायक-सुखकारी
भवन्तु=होवें [और वे]
नः=हमारे
शं योः=रोगों के शमन और भयों के निवारण के लिये
अभि=अन्दर और बाहर [दोनों ओर]
स्रवन्तु=प्रवाहित होवें, तत्पर रहें।

द्यौः शान्ति॑र॒न्तरि॑क्षꣳ शान्ति॑ः पृथि॒वी शा॒न्ति॒राप॒ः शा॒न्ति॒रोष॑धय॒ः शान्ति॑ः। व॒न॒स्पत॑य॒ः शा॒न्ति॒र्विश्वे॑ दे॒वाः शा॒न्ति॒र्ब्रह्म॒ शा॒न्ति॒ः सर्व॒ꣳ शा॒न्ति॒ः शान्ति॑रे॒व शा॒न्ति॒ः सा मा॒ शान्ति॑रेधि॥ १८॥

—यजुः० ३६।१७

द्यौः=द्युलोक
शान्तिः=शान्तियुक्त [होवे]
अन्तरिक्षम्=अन्तरिक्षलोक
शान्तिः=शान्तिमय [होवे]
पृथिवी=पृथिवीलोक
शान्तिः=शान्तिमय [होवे]
आपः=जल तथा प्राण
शान्तिः=शान्तियुक्त [होवें]
ओषधयः=ओषधियाँ
शान्तिः=शान्तिकारक [होवें]
वनस्पतयः=वनस्पतियाँ
शान्तिः=शान्तिकारक [होवें]
विश्वे देवाः=सब विद्वान् जन तथा दिव्य पदार्थ
शान्तिः=शान्तिदायी [होवें]
ब्रह्म=वेदज्ञान तथा ब्रह्माण्ड
शान्तिः=शान्तिमय [होवे]
सर्वम्=सब पदार्थमात्र
शान्तिः=शान्तिमय [हो]
शान्तिः एव=शान्ति ही
शान्तिः=शान्ति [होवे]
सा=वह
शान्तिः=शान्ति
मा=मुझे
एधि=[प्राप्त] होवे।

तच्चक्षुर्देवहितम्पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतम्प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतम्भूयश्च शरदः शतात्॥ १९॥

—यजुः० ३६।२४

चक्षुः=सबको देखने वाला
देवहितम्=धर्मात्मा-विद्वानों का हितकारी
पुरस्तात्=सृष्टि से पूर्व भी विद्यमान रहने वाला
शुक्रम्=शुद्धस्वरूप परब्रह्म
उत् चरत्=उत्तम रीति से व्याप्त एवं प्राप्त है।
तत्=उस [ब्रह्म] को
शतम्=सौ
शरदः=शरद् ऋतुओं (=वर्षों तक)
पश्येम=हम साक्षात् करें (उसका दर्शन करें)
शतम्=सौ
शरदः=वर्षों पर्यन्त
जीवेम=हम जीवित रहें।
शतम्=सौ
शरदः=वर्षपर्यन्त
शृणुयाम=[ईश्वरगुण आदि] सुनें।
शतम्=सौ
शरदः=वर्षों तक
प्र ब्रवाम=उत्तम वचन बोलें।
शतम्=सौ
शरदः=वर्षपर्यन्त
अदीनाः=सम्पन्न ऐश्वर्यवान्
स्याम=होवें
च=और
शतात्=सौ
शरदः=वर्ष से भी
भूयः=अधिक [देखें, जीवें, सुनें, बोलें, सम्पन्न बनें]।

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति।
दूरङ्गमञ्ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २० ॥
—यजु:० ३४।१

यत्=जो
दैवम्=दिव्य गुणों वाला [मन]
जाग्रतः=जागते हुए प्राणी का
दूरम्=दूरस्थ वस्तु को
उद् आ एति=अच्छी प्रकार से प्राप्त करता है।
तद् उ=वही [मन]
सुप्तस्य=सोते हुए प्राणी का
तथैव=वैसे ही (=जागते हुए के जैसा ही)
एति=[दूरस्थ वस्तु को] प्राप्त होता है
दूरङ्गमम्=दूरस्थ विषय को प्राप्त होने वाला
ज्योतिषाम्=ज्ञानरूपी प्रकाश प्राप्त कराने वाली ज्ञानेन्द्रियों में से
ज्योतिः=[मुख्य] ज्ञान-प्रकाश प्राप्त कराने वाला-
एकम्=प्रधान
तत्=वह
मे=मेरा
मनः=मन
शिवसङ्कल्पम्=कल्याणयुक्त और ईश्वर-सम्बन्धी विचारोंवाला
अस्तु=होवे।

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः।
यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २१ ॥
—यजु:० ३४।२

येन=जिस [मन] के द्वारा
अपसः=कर्मनिष्ठ
धीराः=धैर्यशाली
मनीषिणः=मननशील ज्ञानी लोग
यज्ञे=यज्ञकर्म में [और]
विदथेषु=ज्ञान-प्रसङ्गों में
कर्माणि=कर्मों को
कृण्वन्ति=करते हैं।
यत्=जो कि
अपूर्वम्=अद्भुत
यक्षम्=देवपूजा-सङ्गतिकरण का साधन है [और]
प्रजानाम्=प्राणियों के
अन्तः=भीतर [वर्त्तमान रहता है]
तत्=वह
मे=मेरा
मनः=मन
शिवसङ्कल्पम्=कल्याणकारी विचारों वाला और प्रभुमय सङ्कल्पों वाला
अस्तु=होवे।

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्जोतिरन्तरमृतं प्रजासु। यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २२ ॥
—यजु:० ३४।३

यत्=जो [मन]
प्रज्ञानम्=अच्छे ज्ञान वाला
उत=और
चेतः=चेतना [का प्रकाशक]
च=और
धृतिः=धैर्य [का आधार] है
यत्=जो
प्रजासु=प्राणियों में
अन्तः=भीतर [रहता हुआ]
ज्योतिः=[ज्ञानरूपी] प्रकाश [का साधन है] और
अमृतम्=[चिरकाल तक] अविनाशी [है]
यस्मात्=जिसके-
ऋते=बिना
किञ्चन=कुछ भी
कर्म=कर्म
न=नहीं
क्रियते=किया जाता है
तन्मे मनः० [पूर्ववत्]

येनेदम्भूतं भुवनम्भविष्यत् परिगृहीतममृतेन सर्वम्।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥ २३॥

—यजुः० ३४।४

येन=जिस
अमृतेन=[चिरकाल तक] नष्ट न होने वाले [मन के द्वारा]
इदम्=यह
भूतम्=भूतकाल-सम्बन्धी
भुवनम्=वर्त्तमानकाल-सम्बन्धी [और]
भविष्यत्=भविष्यत्काल-सम्बन्धी
सर्वम्=समस्त विषय
परिगृहीतम्=ग्रहण किया हुआ [होता है]
येन=जिस [मन] के द्वारा
सप्तहोता=सात होताओं वाला
यज्ञः=यज्ञ
तायते=सम्पादित किया जाता है [तन्मे मनः० आदि पूर्ववत्]

यस्मिन्नृचः साम यजूꣳषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः।
यस्मिँश्चित्तꣳ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥ २४॥

—यजुः० ३४।५

यस्मिन्=जिस [मन] में
ऋचः=ऋचाएँ (=ऋग्वेद)
साम=सामवेद [और]
यस्मिन्=जिस [मन] में
यजूंषि=यजुर्वेद
रथनाभौ=रथ की नाभि में
अराः इव=अरों (=ताड़ियों) के समान
प्रतिष्ठिताः=जड़े हुए [रहते हैं]
यस्मिन्=जिस [मन] में
प्रजानाम्=प्राणियों का
सर्वम्=समस्त
चित्तम्=चिन्तनसामर्थ्य
ओतम्=पिरोया हुआ [रहता है]
[तन्मे मनः० आदि पूर्ववत्]

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान् नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिनऽइव।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥ २५॥

—यजुः० ३४।६

सुषारथिः=प्रवीण सारथि
अभीशुभिः=लगामों के द्वारा
वाजिनः=बलवान्-
अश्वान् इव=घोड़ों को जैसे [वैसे]
यत्=जो [मन]
मनुष्यान्=मनुष्यों को
नेनीयते=बारम्बार [इधर-उधर] पहुँचाता है।

यत्=[और] जो [मन]
हृत्प्रतिष्ठम्=हृदय में स्थित-
अजिरम्=[विषयादि में] लगाने वाला तथा जीर्ण न होने वाला [और]
जविष्ठम्=अत्यन्त प्राप्ति करने वाला [है]
[तन्मे मनः० इत्यादि पूर्ववत्]

स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते।
शं राजन्नोषधीभ्यः॥ २६॥

—साम० उत्तरा० १।१।३

राजन्=हे देदीप्यमान परमेश्वर!
सः=वह [सर्वव्यापक] तू
नः=हमारी
गवे=गौ (=गो-समुदाय) के लिये
शम्=शान्तिदायक
पवस्व=होइये

जनाय=मनुष्यसमुदाय के लिये
शम्=शान्तिकारक [हूजिये]
अर्वते=अश्वसमूह के लिये
शम्=शान्तिदाता [होइये]
ओषधीभ्यः=ओषधियों के लिये
शम्=शान्तिस्थापक [होइये]

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे।
अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु॥ २७॥

—अथर्व० १९।१५।५

नः=हमारे लिये [वह परमेश्वर]
अन्तरिक्षम्=अन्तरिक्ष को
अभयम्=भयरहित
करति=करता है
इमे=इन-
उभे=दोनों
द्यावापृथिवी=द्युलोक और पृथिवी-लोक को
अभयम्=भयरहित [करता है]।

नः=हमारे
पश्चात्=पृष्ठ भाग में
अभयम्=निर्भयता [हो]
पुरस्तात्=आगे की ओर
अभयम्=निर्भयता [हो]
उत्तरात्=ऊपर की ओर [तथा]
अधरात्=नीचे की ओर
अभयम्=निर्भयता
अस्तु=होवे।

अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु॥ २८॥
—अथर्व० १९।१५।६

मित्रात्=मित्र से
अभयम्=निर्भयता [प्राप्त हो]
अमित्रात्=शत्रु से
अभयम्=निर्भयता [हो]
ज्ञातात्=जाने हुए (=परिचित) से
अभयम्=निर्भयता [हो]
परोक्षात्=अजाने (=अपरिचित) से
अभयम्=निर्भयता [प्राप्त हो]
नः=हमें
नक्तम्=रात्रि में
अभयम्=निर्भयता [प्राप्त हो]
दिवा=दिन में
अभयम्=निर्भयता [प्राप्त हो]
सर्वाः=समस्त
आशाः=दिशाएँ (=दिशाओं में विद्यमान प्राणी)
मम=मेरे
मित्रम्=मित्र
भवन्तु=होवें।

॥ इति शान्तिकरणम् ॥

बृहद्-यज्ञ-होम-मन्त्र

व्याहृति-आहुति-मन्त्र

ओं भूरग्नये स्वाहा। इदमग्नये, इदं न मम॥ १॥

भूः=पृथिवीस्थानीय-
अग्नये=अग्नि के लिये
स्वाहा=[यह] आहुति [है]
इदम्=यह हविः
अग्नये=अग्नि के लिये [है]
इदम्=यह [हवि] [अब]
मम=मेरी
न=नहीं [है]।

ओं भुवर्वायवे स्वाहा। इदं वायवे, इदं न मम॥ २॥

भुवः=अन्तरिक्ष में स्थित-
वायवे=वायु के लिये
स्वाहा=[यह] उत्तम हवि है
इदम्=यह हविः
वायवे=वायु के लिये [है]
इदम्=यह [हवि अब]
मम=मेरी
न=नहीं है।

ओं स्वरादित्याय स्वाहा। इदमादित्याय, इदं न मम॥ ३॥

स्वः=अन्तरिक्ष में स्थित
आदित्याय=सूर्य के लिये
स्वाहा=[यह] आहुतिदान [है]
इदम्=यह [हवि]
आदित्याय=सूर्य के लिये [है]
इदम्=यंह [हवि] अब
मम=मेरी
न=नहीं [है]।

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा।
इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः, इदं न मम॥४॥

भूर्भुवःस्वः=पृथिवी-अन्तरिक्ष-द्युलोक स्थित-[क्रमशः]
अग्निवाय्वादिभ्येभ्यः=अग्नि-वायु-सूर्य के लिये
स्वाहा=[यह] हवि [देता हूँ]
इदम्=यह [हवि]
अग्निवाय्वादित्येभ्यः=अग्नि-वायु-सूर्य के लिये [है]
इदम्=यह [हवि] [अब]
मम=मेरी
न=नहीं [है]।

पवमान-आहुति-मन्त्र

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्न आयूंषि पवस आ सुवोर्जमिषं च नः। आरे बाधस्व दुच्छुनां स्वाहा॥ इदमग्नये पवमानाय, इदं न मम॥१॥

भूः=हे प्राणाधार-
भुवः=दुःखहर्त्ता-
स्वः=सुखदाता-
अग्ने=सुपथदर्शक प्रभो! [आप]
नः=हमारी
आयूंषि=आयुओं को
पवसे=प्रगतिमय तथा पवित्र बनाते हो [आप हमें]
ऊर्जम्=बल तथा प्राण-
च=और
इषम्=अन्न तथा ज्ञान
आ सुव=प्राप्त कराइये।
दुच्छुनाम्=दुष्टों की [दुष्टता] को [हमसे]
आरे=दूर ही
बाधस्व=रोक दीजिये
स्वाहा=[यह मेरी] वास्तविक निवेदन पूर्ण हवि है।
इदम्=यह [हवि]
पवमानाय=पवित्र एवं गतिदाता
अग्नये=प्रभु की आज्ञा एवं अग्नि के लिये है।
इदम्=यह [हवि] अब
मम=मेरी
न=नहीं है।

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्निर्ऋषिः पवमानः पांचजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महागयं स्वाहा। इदमग्नये पवमानाय, इदं न मम॥२॥

भूर्भुवः स्वः=[पूर्ववत्]
अग्निः=[जो] सबका प्रकाशक ईश्वर
ऋषिः=ज्ञानप्रदाता
पवमानः=पवित्र करने वाला
पाञ्चजन्यः=पाँचों (=चार वर्ण तथा उनसे भिन्न) प्रकार के मनुष्यों द्वारा उपासनीय [और]
पुरोहितः=सबसे पूर्व आधान एवं ध्यान करने योग्य [है]

तम्=उस
महागयम्=[विश्वरूपी] महान् निवास वाले प्रभु को
ईमहे=हम चाहते हैं और उससे कामना करते हैं।
स्वाहा=[तदर्थ] यह उत्तम हवि [है]
इदमग्नये०=[पूर्ववत्]।

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दधद् रयिं मयि पोषं स्वाहा॥ इदमग्नये पवमानाय, इदं न मम॥ ३॥ —ऋ० ९.६६.१९-२१

भूर्भुवः स्वः=[पूर्ववत्]
अग्ने=हे ज्ञानदाता परमेश्वर!
स्वपाः=सर्वोत्तम कर्मवाले [आप]
अस्मे=हमें
वर्चः=दीप्ति [और]
सुवीर्यम्=उत्तम पराक्रम
पवस्व=प्राप्त कराइये।
मयि=मुझमें
रयिम्=ऐश्वर्य [और]
पोषम्=पुष्टि को
दधद्=धारण कराइये [एतदर्थ]
स्वाहा=[यह] उत्तम कथन [और] हवि है
इदमग्नये०=[पूर्ववत्]।

ओं भूर्भुवः स्वः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस् तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् स्वाहा॥ इदं प्रजापतये, इदं न मम॥ ४॥ —ऋ० १०.१२१.१०

भूर्भुवः स्वः=[पूर्ववत्]
प्रजापते=हे सब प्रजा के स्वामी परमात्मन्!
त्वत्=आपसे
अन्यः=भिन्न दूसरा कोई
ता=उन
एतानि=इन
विश्वा=सब
जातानि=उत्पन्न हुए जड़-चेतनादिकों को
न=नहीं
परि बभूव=तिरस्कृत करता है, अर्थात् आप सर्वोपरि हैं।
यत्कामाः=जिस-जिस पदार्थ की कामना वाले हम लोग
ते=आपका
जुहुमः=आश्रय लेवें और इच्छा करें
तत्=वह-वह [कामना]
नः=हमारी
अस्तु=[सिद्ध] होवे [जिससे]
वयम्=हम लोग
रयीणाम्=धनैश्वर्यों के
पतयः=स्वामी
स्याम=होवें। [तदर्थ]
स्वाहा=[यह] हविः वा दान है

इदम्=यह [हवि]
प्रजापतये=प्रजापति के लिये है
इदम्=यह [अब]
मम=मेरी
न=नहीं [है]

अष्ट-आज्याहुति-मन्त्र

ओं त्वं नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेळोऽव यासिसीष्ठाः।
यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषांसि प्र मुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा॥
इदमग्नीवरुणाभ्याम्, इदं न मम॥ १ ॥

अग्ने!=हे नेतृत्व करने वाले परमेश्वर!
विद्वान्=ज्ञानवान्
त्वम्=आप
नः=हमारे [ऊपर किये गये]
वरुणस्य=अधिष्ठाता के [और]
देवस्य=विद्वान् जन के
हेडः=क्रोध को
अव यासिसीष्ठाः=दूर कर दीजिये।
यजिष्ठः=सबसे अधिक पूजनीय
वह्नितमः=सबसे अधिक प्राप्त कराने वाले [और]
शोशुचानः=अत्यन्त तेजस्वी [आप]
अस्मत्=हमसे
विश्वा=समस्त
द्वेषांसि=द्वेष भावों को
प्र मुमुग्धि=अच्छे प्रकार हटा दीजिये [एतदर्थ]
स्वाहा=[यह] आहुति [है]
इदम्=यह [आहुति]
अग्नीवरुणाभ्याम्=अग्नि और वरुण के लिये [है]
इदम्=यह [अब]
मम=मेरी
न=नहीं है।

ओं स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ। अव यक्ष्व नो वरुणं रराणो वीहि मृळीकं सुहवो न एधि स्वाहा। इदमग्नीवरुणाभ्याम्, इदं न मम॥२॥

—ऋ० ४.१.५

अग्ने!=प्रकाशदाता हे परमेश्वर!
अवमः=रक्षक
सः=वह सर्वव्यापक
त्वम्=तू (=आप)
ऊती=रक्षा के द्वारा
अस्याः=इस-
उषसः=उषावेला के
व्युष्टौ=प्रकाशित होने के समय
नः=हमारे
नेदिष्ठः=समीपतम

भव=होइये।
रराणः=प्रसन्न तथा दानशील आप
नः=हमारे लिये
वरुणम्=अधिष्ठाता को
अव यक्ष्व=मृदु कर दीजिये
मृडीकम्=सुख
वीहि=प्राप्त कराइये [और]
नः=हमारे लिये
सुहवः=सरलता से पुकारने योग्य
एधि=होइये। [एतदर्थ]
स्वाहा=[यह] आहुति [है]
इदमग्नी०=[पूर्ववत्]।

ओम् इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृळय। त्वामवस्युरा चके स्वाहा॥ इदं वरुणाय, इदं न मम॥ ३॥

—ऋ० १.२५.१९

वरुण=हे सर्वाधिष्ठाता सर्वद्रष्टा ईश्वर!
मे=मेरे
इमम्=इस
हवम्=निवेदन को (=पुकार को)
श्रुधि=सुनिये
च=और
अद्य=आज ही
मृडय=सुखी कर दीजिये
अवस्युः=रक्षा का इच्छुक [मैं]
त्वाम्=आपको
आ चके=[अपने शुभ-कर्मों से] सन्तुष्ट करता हूँ। [एतदर्थ]
स्वाहा=[यह] हवि [देता हूँ]
इदम्=यह [हवि]
वरुणाय=वरुण [की आज्ञा के पालन] के लिये [है]
इदम्=यह [हवि], अब
मम=मेरी
न=नहीं है।

ओं तत् त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस् तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः। अहेळमानो वरुणेह बोध्युरुशंस मा न आयुः प्र मोषीः स्वाहा॥ इदं वरुणाय, इदं न मम॥ ४॥

—ऋ० १.२४.११

वरुण=हे सर्वद्रष्टा राजन् ईश्वर!
ब्रह्मणा=वेदमन्त्र से
वन्दमानः=स्तुति करता हुआ मैं
तत्=उस
त्वा=आपको
यामि=प्राप्त करता हूँ (=साक्षात् करता हूँ)।
यजमानः=शुभ-कर्म करने वाला [याज्ञिक]
हविर्भिः=हवियों के [दानों के] द्वारा
तत्=उस सर्वव्यापक ईश्वर से
आशास्ते=प्रार्थना करता है।
[वरुण=हे वरणीय परमेश्वर!]
अहेडमानः=[हमारी] उपेक्षा न करते हुए आप
इह=इस प्रार्थना स्थान में
बुध्यस्व=[हमारे निवेदन को] जानिये

उरुशंस=हे बहुत प्रशंसावाले प्रभो!
नः=हमारी
आयुः=आयु को
मा=मत
प्र मोषीः=कम कीजिये [एतदर्थ]
स्वाहा=[यह] सत्य निवेदन और हवि [है]
इदं वरुणाय०=[पूर्ववत्]।

ओं ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नो अद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः, इदं न मम॥ ५॥

वरुण=हे नियन्ता प्रभो!
ते=तेरे
ये=जो
शतम्=सैंकड़ों
ये=जो
सहस्रम्=हजारों
महान्तः=विशाल
यज्ञियाः=यज्ञसम्बन्धी
पाशाः=पाश (=बन्धन=नियन्त्रण)
वितताः=फैले हुए [हैं]
तेभिः=उनसे
नः=हमें
अद्य=आज ही
सविता=उत्पादक-प्रेरक पिता
विष्णुः=[व्यापक नीतिवाला] राजा
उत=और
विश्वे=सब
स्वर्काः=उत्तम आदर के पात्र
विश्वे=समस्त
मरुतः=प्रणवीर जन
मुञ्चन्तु=छुड़ा दें [एतदर्थ]
स्वाहा=[यह] सत्य निवेदन-पूर्ण हवि [है]
इदम्=[यह] हवि और निवेदन
वरुणाय=वरुण के लिये
सवित्रे=सविता के लिये
विष्णवे=विष्णु के लिये
विश्वेभ्यः देवेभ्यः=सब देवों के लिये [और]
स्वर्केभ्यः=उत्तम आदरणीय
मरुद्भ्यः=प्रणवीरों के लिये [है]
इदम्=यह [अब]
मम=मेरी
न=नहीं [है]।

ओम् अयाश्चाग्ने ऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमया असि। अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजं स्वाहा॥ इदमग्नये-अयसे, इदं न मम॥ ६॥

अग्ने=हे ज्ञान-प्रकाशक प्रभो! [आप]
अयाः=सर्वव्यापक
असि=हो
च=और
अनभिशस्तिपाः=बुराई और बदनामी से रहित लोगों की रक्षा करने वाले [हो]

च=और
सत्यम् इत्=सचमुच ही
त्वम्=आप
अयाः=सर्वज्ञानमय
असि=हो
अयाः=सर्वत्र-प्राप्त [आप]
नः=हमारे
यज्ञम्=देवपूजा आदि शुभकर्म को
वहासि=[पूर्णता तक] प्राप्त कराओ, सफल बनाओ
अयाः=सबको गतिशील बनाने वाले [आप]
नः=हमारे लिये
भेषजम्=उत्तम ओषधि [समूह] को
धेहि=स्थापित कीजिये [एतदर्थ]
स्वाहा=[यह] आहुति देता हूँ
इदम्=यह [हवि]
अयसे-अग्नये=सर्वत्र-प्राप्त ज्ञान-प्रकाशक प्रभु [की आज्ञापालन] के लिये [है]
इदम्=यह [हवि] अब
मम=मेरी
न=नहीं [है]।

ओम् उदु॒त्त॒मं वरु॑ण॒ पाश॑म॒स्मदवा॑ध॒मं वि म॑ध्य॒मं श्र॑थाय। अथा॑ व॒यमा॑दित्य व्र॒ते तवाना॑गसो॒ अदि॑तये स्याम॒ स्वाहा॑। इदं वरुणायाऽऽदित्यायाऽदितये च, इदं न मम॥ ७॥

—ऋ० १.२४.१५

वरुण=हे पापनिवारक ईश्वर!
अस्मत्=हम से
उत्तमम्=अति तीव्र आत्मा-संबंधी
पाशम्=बन्धन को
उत् श्रथाय=अच्छे प्रकार से ढीला कर दीजिये [हटा दीजिये]
अधमम्=निम्न प्रकार के (=शारीरिक) बन्धन को
अव [श्रथाय]=नीचे ही [ढीला कर दीजिये]
मध्यमम्=बीच के [मानसिक-बौद्धिक] बन्धन को
वि [श्रथाय]=विशेषरूप से [ढीला कर दीजिये]
अथ=बन्धन-मुक्ति के बाद
आदित्य=हे अखण्डस्वरूप प्रभो!
वयम्=हम
तव=तेरे
व्रते=नियम में
अनागसः=निरपराधी [रहते हुए]
अदितये=पूर्णता [पूर्ण जीवन] के लिये
स्याम=समर्थ होवें [एतदर्थ]
स्वाहा=[यह] आहुतिदान [है]
इदम्=यह [आहुतिदान]
वरुणाय=वरुण [की आज्ञा के पालन] के लिये [है]
आदित्याय=अखण्स्वरूप प्रभु [के आज्ञापालन] के लिये [है]
च=और
अदितये=परिपूर्णता के लिये [है]
इदम्=यह [अब]
मम=मेरा
न=नहीं है।

ओं भवतं नः समनसौ सचेतसावरेपसौ। मा यज्ञं हिंसिष्टं मां यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः स्वाहा। इदं जातवेदोभ्याम्, इदं न मम ॥ ८ ॥

जातवेदसौ=हे उत्पन्न पदार्थों के ज्ञाता अध्यापको और उपदेशको! [आप लोग]
नः=हमारे [कल्याण के] लिये
समनसौ=समान मन वाले
सचेतसौ=समान ज्ञानवाले [और]
अरेपसौ=निष्पाप
भवतम्=बनो [होओ] [आप दोनों]
यज्ञम्=यज्ञ कर्म को
मा हिंसिष्टम्=नुकसान न पहुँचाओ (=बन्द मत करो)
यज्ञपतिम्=यज्ञ के रक्षक मनुष्य को (=यज्ञकर्त्ता को)
मा=मत (=कष्ट पहुँचाओ) [इस प्रकार]
अद्य=आज से ही [आप लोग]
नः=हमारे लिये
शिवौ=कल्याणकारी
भवतम्=होओ। [एतदर्थ]
स्वाहा=[यह] हवि देता हूँ
इदम्=यह [हवि]
जातवेदोभ्याम्=पदार्थ ज्ञानी अध्यापक और उपदेशक के लिये [है]
इदम्=यह [अब]
मम=मेरी
न=नहीं [है]।

स्विष्टकृद्-आहुति-मन्त्र

ओं यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्। अग्निष्टत् स्विष्टकृद् विद्यात् सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे। अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्धय स्वाहा॥ इदमग्नये स्विष्टकृते, इदं न मम॥

अस्य=इस [नियत]
कर्मणः=कर्म से [भिन्न]
यत्=जो [कर्म]
अत्यरीरिचम्=अतिरिक्त (=व्यर्थ) मैं करता रहा हूँ
वा=अथवा
इह=इस [अनुष्ठान] में
न्यूनम्=[नियत कर्म से] कम
अकरम्=मैंने किया है
तत्=उसे
स्विष्टकृत्=उत्तम अभिलषित पदार्थों को देने वाला-
अग्निः=सर्वज्ञ परमेश्वर
विद्यात्=जाने [और]
मे=मेरे
सर्वम्=समस्त

सुहुतम्=अच्छे प्रकार आहुति दिये हुए को
स्विष्टम्=उत्तम अभिलषित पदार्थ को प्राप्त कराने वाला।
करोतु=बनावे।
सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनाम्=समस्त प्रायश्चित्त-हेतुक आहुति वाली—
कामानाम्=कामनाओं की
समर्धयित्रे=पूर्णता करने वाले
सुहुतहुते=उत्तम प्रकार से आहुति दिये हुए को ग्रहण करनेवाले
अग्नये=अग्नि के लिये
स्वाहा=[यह] आहुति [है] [हे अग्ने!]
नः=हमारी
सर्वान्=समस्त
कामान्=कामनाओं को
समर्धय=अच्छे प्रकार पूर्ण कीजिये
इदम्=यह [हवि]
स्विष्टकृते=अभिलषित की पूर्त्ति करने वाले
अग्नये=अग्नि के लिये है
इदम्=यह [हवि] [अब]
मम=मेरी
न=नहीं [है]।

प्राजापत्याहुति-मन्त्र

ओं प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये, इदं न मम॥

प्रजापतये=प्रजाओं के स्वामी पालक प्रभु के लिये
स्वाहा=[यह] उत्तम निवेदन और हवि [है]
इदम्=यह [हवि]
प्रजापतये=प्रजापति के लिये [है]
इदम्=यह [अब]
मम=मेरी
न=नहीं [है]।

आयु-वर्धन-मन्त्र

ओं स॒वि॒ता प॒श्चाता॑त् स॒वि॒ता पु॒रस्ता॑त् स॒वि॒तोत्त॒रात्ता॑त् स॒वि॒ताध॒रात्ता॑त्। स॒वि॒ता नः॑ सुवतु स॒र्वता॑तिं स॒वि॒ता नो॑ रासतां दी॒र्घमायुः॑॥ १॥
—ऋ० १०.३६.१४

सविता=सर्वजगदुत्पादक ईश्वर
नः=हमारे लिये
पश्चातात्=पीठ की ओर
सविता=शुभ-कर्मों में प्रेरक प्रभु
पुरस्तात्=आगे की ओर
सविता=ऐश्वर्यों का स्वामी परमात्मा
उत्तरात्तात्=ऊपर की ओर
सविता=सुमति-प्रेरक परमेश्वर
अधरात्तात्=नीचे की ओर
सविता=ऐश्वर्यदाता जगदीश्वर
सर्वतातिम्=समस्त पदार्थों की वृद्धि को
सुवतु=प्रेरित करे (=सिद्ध करे)

सविता=शुभ-कर्मों में प्रेरणकर्त्ता प्रभु
नः=हमें
दीर्घम्=लम्बी
आयुः=आयु
रासताम्=प्रदान करे।

ओम् आयुरस्यायुर् मे दाः स्वाहा ॥ २ ॥

—अथर्व० २.१७.४

[हे प्रभो!] आप
आयुः=नित्य सत्ता वाले सर्वज्ञ ईश्वर [हैं]
मे=मुझे भी
आयुः=लम्बी आयु
दाः=प्रदान कीजिये।
स्वाहा=[यह मेरा] सत्य निवेदन [है]

ओं परि माऽग्ने दुश्चरिताद् बाधस्वा मा सुचरिते भज।
उदायुषा स्वायुषोदस्थाममृताँ अनु ॥ ३ ॥ —यजुः० ४.२८

अग्ने=हे सर्वज्ञ ईश्वर!
मा=मुझे
दुश्चरितात्=बुरे आचरण से
परि बाधस्व=दूर कर दीजिये
मा=मुझे
सुचरिते=शुभ आचरण में
आभज=नियुक्त कीजिये।
आयुषा=[मैं] दीर्घ आयु के द्वारा
स्वायुषा=सुखी और स्वावलम्बी आयु के द्वारा
अमृतान् अनु=अमर मुक्तात्माओं के अनुसार
उत् अस्थाम्=उन्नति को प्राप्त होऊँ।

ओं न तद् रक्षांसि न पिशाचास् तरन्ति देवानामोजः प्रथमजं ह्येतत्। यो बिभर्त्ति दाक्षायणं हिरण्यं स देवेषु कृणुते दीर्घमायुः स मनुष्येषु कृणुते दीर्घमायुः ॥ ४ ॥

—यजु० ३४.५१

तत्=उस तेज को
न=न तो
रक्षांसि=राक्षस ही
तरन्ति=पार कर सकते हैं (=दबा सकते हैं) [और]
न=न ही
पिशाचाः=पिशाच ही [दबा सकते हैं] [क्योंकि]
एतत्=यह
ओजः=तेज
हि=निश्चय से
देवानाम्=दिव्य आत्माओं के [जीवन में]
प्रथमजम्=सर्वोत्कृष्ट धातु से उत्पन्न [होता है]
यः=जो मनुष्य

दाक्षायणम्=आत्मशासन (=संयम) से प्राप्त
हिरण्यम्=वीर्य को
बिभर्त्ति=धारण करता है (=संरक्षित करता है)
सः=वह
देवेषु=दिव्य विद्वानों में [सम्भाव्य]
दीर्घम्=लम्बी
आयुः=आयु को
कृणुते=[प्राप्त] करता है।
सः=वह
मनुष्येषु=मनुष्यों में [सम्भाव्य]
दीर्घम्=लम्बी
आयुः=आयु को
कृणुते=[प्राप्त] करता है।

ओं तुचे तनाय तत् सु नो द्राघीय आयुर्जीवसे।
आदित्यासः सुमहसः कृणोतन॥ ५॥ —ऋ० ८.१८.१८

सुमहसः=हे उत्तम तेज वाले-
आदित्यासः=परिपूर्ण जीवन वाले दिव्य विद्वानो!
तुचे=[हमारे] पुत्र-समूह के लिये [और]
तनाय=पौत्र-समुदाय के लिये [तथा]
जीवसे=सबके जीवन के लिये
द्राघीयः=बहुत लम्बी
आयुः=आयु
कृणोतन=कीजिये (=प्राप्त कराइये)

ओं देवानां भद्रा सुमतिर् ऋजूयतां देवानां रातिरभि नो नि वर्त्तताम्। देवानां सख्यमुप सेदिमा वयं देवा न आयुः प्र तिरन्तु जीवसे॥ ६॥ —ऋ० १.८९.२

देवानाम्=दिव्य आत्माओं की
भद्रा=कल्याणकारिणी
सुमतिः=उत्तम बुद्धि [और
ऋजूयताम्=सरल जीवन वाले-
देवानाम्=विद्वानों की
रातिः=दानवृत्ति
नः=हमें
अभि=[आन्तरिक और बाह्य] दोनों ओर
नि वर्त्तताम्=सिद्ध करे (=सफल करे)।
वयम्=हम सब
देवानाम्=विद्वानों की, दिव्य आत्माओं की
सख्यम्=मित्रता को
उप सेदिम=समीपता से प्राप्त करें।
देवाः=विद्वान् जन
जीवसे=सफल जीवन के लिये
नः=हमारी
आयुः=आयु को
प्र तिरन्तु=खूब बढ़ावें।

ओम् अग्नीषोमा य आहुतिं यो वां दाशाद्धविष्कृतिम्।
स प्रजया सुवीर्यं विश्वमायुर्व्यश्नवत्॥ ७॥

—ऋ० १.९३.३

अग्नीषोमा=हे तेजस्वी तथा सुशील विद्वज्जनो!
वाम्=आप दोनों की [आज्ञानुसार]
यः=जो मनुष्य
आहुतिम्=[घृत की] आहुति [और]
यः=जो
हविष्कृतिम्=हवि का भाग
दाशात्=देता है।
सः=वह
प्रजया=सन्तानों के साथ
सुवीर्यम्=उत्तम पराक्रम को [और]
विश्वम्=सम्पूर्ण
आयुः=आयु को
वि अश्नवत्=विशेषरूप से प्राप्त करता है।

ओं दक्षिणावतामिदिमानि चित्रा दक्षिणावतां दिवि सूर्यासः।
दक्षिणावन्तो अमृतं भजन्ते दक्षिणावन्तः प्र तिरन्त आयुः॥ ८॥

—ऋ० १.१२५.६

दक्षिणावताम्=शीघ्रता से कार्य करनेवालों के
इत्=ही
इमानि=ये
चित्रा=आश्चर्यकारक [कर्मफल होते हैं]
दक्षिणावताम्=वृद्धि और प्रगति करने वालों के [लिये ही]
दिवि=दिव्य स्तर पर
सूर्यासः=सूर्य जैसे ऊर्जा और प्रकाश के अनुभव [होते हैं]
दक्षिणावन्तः=आत्मशासन (=संयम) वाले लोग
अमृतम्=मोक्ष को
भजन्ते=प्राप्त करते हैं
दक्षिणावन्तः=दक्षिणा (=यथा-योग्य भेंट, दान-पारिश्रमिक) देने वाले लोग
आयुः=[अपनी] आयु को
प्र तिरन्ते=खूब बढ़ाते हैं।

ओम् आयुरस्मै धेहि जातवेदः प्रजां त्वष्टरधि निधेह्यस्मै।
रायस्पोषं सवितरा सुवास्मै शतं जीवाति शरदस्तवायम्॥ ९॥

—अथर्व० २.२९.२

जातवेदः=हे उत्पन्न और प्रसिद्ध पदार्थों के ज्ञाता और उनमें विद्यमान परमेश्वर!
अस्मै=इस मनुष्य के लिये
आयुः=शुभ आयु को
धेहि=धारण कराओ
त्वष्टः=हे पापनिवारक प्रभो!
अस्मै=इस मनुष्य के लिये

प्रजाम्=सुलक्षणवान् सन्तान को
अधि नि धेहि=अवश्य प्राप्त कराओ।
सवितः=हे प्रेरक प्रभो!
अस्मै=इसके लिये
रायः पोषम्=धन की वृद्धि
आसुव=कीजिये [तब]
तव=आपका
अयम्=यह [उपासक]
शतम्=सौ
शरदः=शरद् ऋतुओं तक
जीवाति=जीवित रह सकेगा।

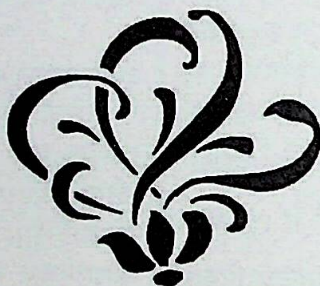
ओम् आयुषाऽऽयुःकृतां जीवाऽऽयुष्मान् जीव मा मृथाः।
प्राणेनात्मन्वतां जीव मा मृत्योरुदगा वशम्॥ १०॥
—अथर्व० १९.२७.८

[हे प्रिय!]
आयुःकृताम्=आयु को बढ़ाने वाले दीर्घायु जनों की [जैसी]
आयुषा=आयु के साथ
जीव=तू जीवित रह
आयुष्मान्=उत्तम आयुवाला होकर
जीव=तू जीवन धारण कर
मा=मत
मृथाः=मरण को प्राप्त हो।
आत्मन्वताम्=आत्मवशी (=संयमी) लोगों के [सदृश]
प्राणेन=प्राण के साथ
जीव=जीवित रह
मृत्योः=मृत्यु के
वशम्=वश को (=अधीनता को)
मा=मत
उत् अगाः=प्राप्त हो

ओं तच्चक्षुर् देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्॥ ११॥
—यजुः० ३६.२४

चक्षुः=सबको देखने वाला
देवहितम्=धर्मात्मा-विद्वानों का हितकारी
पुरस्तात्=सृष्टि से पूर्व भी विद्यमान रहने वाला
शुक्रम्=शुद्धस्वरूप परब्रह्म
उत् चरत्=उत्तम रीति से व्याप्त एवं प्राप्त है।
तत्=उस [ब्रह्म] को
शतम्=सौ
शरदः=शरद् ऋतुओं (=वर्षों) तक
पश्येम=हम साक्षात् करें (उसका दर्शन करें)
शतम्=सौ
शरदः=वर्षोंपर्यन्त
जीवेम=हम जीवित रहें।
शतम्=सौ
शरदः=वर्षपर्यन्त
शृणुयाम=[ईश्वरगुण आदि] सुनें
शतम्=सौ

शरदः=वर्षों तक
प्र ब्रवाम=उत्तम वचन बोलें।
शतम्=सौ
शरदः=वर्षों तक
अदीनाः=सम्पन्न ऐश्वर्यवान्
स्याम=होवें
च=और
शतात्=सौ
शरदः=वर्ष से भी
भूयः=अधिक देखें, जीवें, सुनें, बोलें सम्पन्न बनें।



[१]

आज मिल सब गीत गाओ, उस प्रभु के धन्यवाद।
जिसका यश नित गाते हैं, गन्धर्व मुनिजन धन्यवाद॥ १॥
मन्दिरों में कन्दरों में, पर्वतों के शिखर पर।
देते हैं लगातार सौ सौ, बार मुनिवर धन्यवाद॥ २॥
करते हैं जंगल में मंगल, पक्षिगण हर शाख पर।
पाते हैं आनन्द मिल, गाते हैं स्वरभर धन्यवाद॥ ३॥
कूप में तालाब में, सिन्धु की गहरी धार में।
प्रेमरस में तृप्त हो, करते हैं जलचर धन्यवाद॥ ४॥
शादियों में कीर्तनों में, यज्ञ और उत्सव आदि में
मीठे स्वर से चाहिये, करें नारी-नर सब धन्यवाद॥ ५॥
गान कर 'अमीचन्द' भजनानन्द ईश्वर की स्तुति।
ध्यान धर सुनते हैं श्रोता, कान धर-धर धन्यवाद॥ ६॥

[२]

अब यहाँ सत्संग सजाया जायेगा, ऋषियों का सन्देश सुनाया जायेगा।
मीठा मीठा साज बजाया जायेगा, और मधुर संगीत सुनाया जायेगा॥
मत करना यह आशा, होगी सतरंगी भाषा।
या सब लोग बुलाकर कोई, सिनेमा खेल तमाशा।
दिखाया जायेगा। ऋषियों का सन्देश........॥ अब यहाँ० ॥
सुन्दर कर्म कमाना, नरजीवन सफल बनाना।
देश धर्म जाति पर, अपना कर्त्तव्य निभाना।
बताया जायेगा। ऋषियों का सन्देश........॥ अब यहाँ० ॥
सद्ग्रन्थों का पढ़ना, सीढ़ी दर सीढ़ी चढ़ना।
जीवन की राहों में, हिम्मत से आगे बढ़ना।
सिखाया जायेगा। ऋषियों का सन्देश........॥ अब यहाँ० ॥
कहे 'पथिक' जो योगी, यह बात यहाँ पर होगी।
ज्ञान की दवा पिलाकर, हर नया पुराना रोगी।
बचाया जायेगा। ऋषियों का सन्देश........॥ अब यहाँ० ॥

[३]

यज्ञ जीवन का हमारे, श्रेष्ठ सुन्दर कर्म है।
यज्ञ का करना कराना, आर्यों का धर्म है॥ १॥
यज्ञ से दिशा हो सुगंधित, शान्त हो वातावरण।
यज्ञ से सद्ज्ञान हो, हो यज्ञ से शुद्धाचरण॥ २॥
यज्ञ से हो शुद्ध काया, व्याधियाँ सब नष्ट हों।
यज्ञ से सुखसम्पदा हों, दूर सारे कष्ट हों॥ ३॥
यज्ञ से दुष्काल मिटते, यज्ञ से जलवृष्टि हो।
यज्ञ से धनधान्य हो, बहु भाँति सुखमय सृष्टि हो॥ ४॥
यज्ञ है प्रिय मोक्षदाता, यज्ञ शक्ति अनूप है।
यज्ञमय यह विश्व है, और विश्व यज्ञस्वरूप है॥ ५॥
यज्ञमय अखिलेश! ऐसी, आप अनुकम्पा करें।
यज्ञ के प्रति आर्यजनता, में अमित श्रद्धा भरें॥ ६॥
यज्ञ-पुण्य-प्रकाश से, सब पापताप-तिमिर हटें।
यज्ञनौका से अगम, संसार-सागर को तरें॥ ७॥

[४]

पूजनीय प्रभो! हमारे, भाव उज्ज्वल कीजिये।
छोड़ देवें छल कपट को, मानसिक बल दीजिये॥ १॥
वेद की बोलें ऋचाएँ, सत्य को धारण करें।
हर्ष में हों मग्न सारे, शोकसागर से तरें॥ २॥
अश्वमेधादिक रचायें, यज्ञ पर-उपकार को।
धर्ममर्यादा चलाकर, लाभ दें संसार को॥ ३॥
नित्य श्रद्धा-भक्ति से, यज्ञादि हम करते रहें।
रोगपीड़ित विश्व के, सन्ताप सब हरते रहें॥ ४॥
भावना मिट जाय मन से, पाप अत्याचार की।
कामनाएँ पूर्ण होवें, यज्ञ से नर-नार की॥ ५॥
लाभकारी हो हवन, हर जीवधारी के लिये।
वायु जल सर्वत्र हों, शुभ गन्ध को धारण किये॥ ६॥
स्वार्थभाव मिटे हमारा, प्रेम-पथ विस्तार हो।
'इदं न मम' का सार्थक, प्रत्येक में व्यवहार हो॥ ७॥
प्रेम रस में मग्न होकर, वन्दना हम कर रहे।
'नाथ' करुणारूप! करुणा, आपकी सब पर रहे॥ ८॥

[५]

जय जय पिता परम आनन्द दाता।
जगदादिकारण मुक्ति प्रदाता॥ १ ॥
अनन्त और अनादि विशेषण हैं तेरे।
तू सृष्टि का कर्त्ता, धर्त्ता, संहर्त्ता॥ २॥ जय जय०॥
सूक्ष्म से सूक्ष्म तू है स्थूल इतना।
कि जिसमें यह ब्रह्माण्ड सारा समाता॥ ३॥ जय जय०॥
मैं लालित व पालित हूँ पितृस्नेह का।
यह प्राकृत सम्बन्ध है तुझ से ताता॥ ४॥ जय जय०॥
करो शुद्ध निर्मल मेरी आत्मा को।
करूँ मैं विनय नित्य सायं व प्रातः॥ ५॥ जय जय०॥
मिटाओ मेरे भय आवागमन के।
फिरूँ न जन्म पाता और बिलबिलाता॥ ६॥ जय जय०॥
बिना तेरे है कौन दीनन का बन्धु।
कि जिसको मैं अपनी अवस्था सुनाता॥ ७॥ जय जय०॥
'अमी' रस पिलाओ कृपा करके मुझको।
रहूँ सर्वदा तेरी कीर्त्ति को गाता॥ ८॥ जय जय०॥

[६]

तू है सच्चा पिता सारे संसार का ओ३म् प्यारा।
तू ही तू ही है रक्षक हमारा॥
चाँद सूरज सितारे बनाये, पृथ्वी आकाश पर्वत सजाये।
अन्त पाया नहीं, तेरा पाया नहीं पारवारा॥
तू ही तू ही०....................
पक्षीगण राग सुन्दर हैं गाते, जीवजन्तु भी सिर हैं झुकाते।
उसको ही सुख मिला, तेरी राह पर चला जो प्यारा॥
तू ही तू ही०....................
पाप पाखण्ड हमसे छुड़ाओ, वेदमार्ग पर हमको चलाओ।
लगे भक्ति में मन, करे सन्ध्या हवन जगत् सारा॥
तू ही तू ही०....................
पर-दुःख हरने में मुझको लगाना, कष्ट 'नंदलाल' सबके मिटाना।
दुःखिया कंगालों का और धनवालों का तू है सहारा॥
तू ही तू ही०....................

[७]

हे नाथ जगन्नियन्ता! महिमा अपार तारो।
योगी यति बिचारा, थाक्या करी विचारो॥ टेक॥
ब्रह्माण्ड आ रचायुं, तारी महा कळा थी।
आकाश अमाप कीधुं, जेनो नहीं किनारो॥ हे नाथ०॥ १॥
लाखों ग्रहो प्रकाशे, तारा अतुल्य बलथी।
तुं छे रविशशी ने, गगने घुमावनारो॥ हे नाथ०॥ २॥
वायु सदा वहे छे, तारा अपार बल थी।
अग्नि तपी रह्यो छे, ते पण प्रताप तारो॥ हे नाथ०॥ ३॥
तारी सहज कृति थी, पृथ्वी प्रचंड पहाड़ो।
प्रकट्या महा समुद्रो, नदियो वहे हजारो॥ हे नाथ०॥ ४॥
पंखी पशु अने कंई, वृक्षो फलो ने फुल थी।
शणगारियां प्रभु तें, सृष्टि तणां बजारो॥ हे नाथ०॥ ५॥
एवा अजब जगत् ने, पैदा करी तुं पाळे।
अन्ते अहो बने तुं, सघलुं संहारनारो॥ हे नाथ०॥ ६॥
तारी अगाध लीला, शकिये जरा न जाणी।
पण तुं सकल जगत् ना, मनने कळी जनारो॥ हे नाथ०॥ ७॥
तारी गति समझवा, तारुं सुनाम भजवा।
हे तात! दया करी दे, सुमति ने सुविचारो॥ हे नाथ०॥ ८॥
हे कृपानिधान! तारुं, भावे भजन करी ने।
पुण्यो रळी रही हुँ, भव ने तरी जनारो॥ हे नाथ०॥ ९॥

[८]

एकज दे चिनगारी

एकज दे चिनगारी महानल! एकज दे चिनगारी!
चकमक लोढुं घसतां घसतां, खरची जिन्दगी सारी।
जामगरी मां तणखो न पड़्यो, न फळी मेहनत मारी॥
महानल०॥ १॥
चांदो सळग्यो सूरज सळग्यो, सळगी आभ अटारी।
ना सळगी एक सगडी मारी, वात विपद नी भारी॥
महानल०॥ २॥
ठंडी मां मुज काया थथरे, खूटी धीरज मारी।
वैश्वानर! हूँ अधिक न मांगुं, मांगुं एकज दे चिनगारी॥
महानल०॥ ३॥

[९]

ओम् है परम पिता का नाम, भज लो प्यारे ओम् का नाम।
चाहे सुबह हो चाहे शाम, भज लो प्यारे ओम् का नाम॥ टेक॥
ओम् है वेदों का वरदान, ओम् का नाद है ब्रह्म समान।
ओम् है जीवन ओम् है प्राण, ओम् में रहते स्वयं भगवान्।
ओम् को सिमरो आठों याम, भज लो प्यारे ओम् का नाम॥ १॥
ओम् की ध्वनि है अति पावन, ओम् का मन्त्र है मनभावन।
ओम् का अक्षर है अनुपम, यह सृष्टि का शब्द प्रथम।
इस पर निछावर शब्द तमाम, भज लो प्यारे ओम् का नाम॥ २॥
ओम् कहो ओंकार कहो, शब्द यह बारम्बार कहो।
ओम् की महिमा अपरम्पार, ओम् करेगा बेड़ापार।
जीतेगो जीवन संग्राम, भज लो प्यारे ओम् का नाम॥ ३॥
मनुष्य जनम पाने वालो! जीवन धन्य बना डालो।
इत उत नाहक मत दौड़ो, ओम् से निज नाता जोड़ो।
निश्चय होगा शुभ परिणाम, भज लो प्यारे ओम् का नाम॥ ४॥
ओम् का नाम है प्रभु का नाम, ओम् है परमानन्द का धाम।
ओम् का सुमिरण है अनमोल, ऋषि-मुनियों ने देखा तोल।
ओम् है चंचल चित की लगाम, भज लो प्यारे ओम् का नाम॥ ५॥
ओम् भज ओम् भज ओम् भज ओम्, सब कोई बोलो भाई ओम् ओम्।

[१०]

योगी बनकर ओम् के दर्शन मैं भी पाऊँगा।
वश में कर मन आदि को, प्रभु में ध्यान लगाऊँगा॥ ध्रुव०॥
वर्षों मैंने व्यर्थ गुजारे, विषयों में ही ध्यान रहा।
दुर्जन-मण्डल में ही मेरा, बढ़ा चढ़ा सम्मान रहा।
उसका कटुफल चाखकर, अब सब पाप भगाऊँगा॥ १॥ योगी०॥
मन में केवल चाह यही है, पल पल पग पग ओम् जपूँ।
ब्रह्मचर्य नियमों को पालूँ, चाहे लाखों ताप तपूँ।
निज अनुभव का ध्यान धर, उत्तम कर्म कमाऊँगा॥ २॥ योगी०॥
सच्चा अभ्यासी बनकर मैं, चित्तवृत्ति को रोकूँगा।
पाप-नदी की धारा को, सुज्ञान-सूर्य से सोखूँगा।
'ओम् निकट है' जानकर, मन की ज्योति जगाऊँगा॥ ३॥ योगी०॥
ओम् सर्वदा सारे जग का, निश दिन अति कल्याण करे।
कभी न खावे कभी न सोवे, नित सुत-हित का ध्यान धरे।
सबसे उत्तम ओम् है, उसके ही गुण गाऊँगा॥ ४॥ योगी०॥
(व्रतानन्द जी संन्यासी, संस्थापक गुरुकुल चित्तौड़गढ)

[११]

ओम् जपो सब प्राणी मिलकर ओम् जपो।
सफल बने ज़िन्दगानी, मिलकर ओम् जपो॥
ओम् नाम है सबसे न्यारा, सबसे उत्तम सबसे प्यारा।
कोई न जिसका सानी, मिलकर ओम् जपो॥ ओम् जपो० ॥
घट घट वासी अन्तर्यामी, सबका मालिक एक ही स्वामी।
प्रियतम दिलबर जानी, मिलकर ओम् जपो॥ ओम् जपो० ॥
जिसने सारा जगत् रचाया, यह धरती आकाश बनाया।
रचे आग और पानी, मिलकर ओम् जपो॥ ओम् जपो० ॥
कष्ट-विनाशक और सुखदायक, रक्षक पालक परम सहायक।
धन-बल-यश का दानी, मिलकर ओम् जपो॥ ओम् जपो० ॥
पृथ्वी सूरज चांद सितारे, ऋषि मुनि योगी गुरुजन सारे।
जपते ज्ञानी ध्यानी, मिलकर ओम् जपो॥ ओम् जपो० ॥
न कोई लगता पैसा धेला, न कोई मुश्किल न ही झमेला।
बड़ी 'पथिक' आसानी, मिलकर ओम् जपो॥ ओम् जपो० ॥

[१२]

काशी जाकर देख लिया, मथुरा जाकर देख लिया।
कहीं पे मन की मैल न उतरी, खूब नहाकर देख लिया॥
पता नहीं वह कहाँ रहता है, यहाँ पे है कि वहाँ रहता है।
घंटा डफ घड़ियाल मजीरे, झाँझ बजा कर देख लिया॥ काशी० ॥
वस्त्राभूषण भी पहनाये, शयन जागरण भी करवाये।
धूप दीप नैवेद्य चढ़ाया, तिलक लगा कर देख लिया॥ काशी० ॥
जिस वस्तु को हाथ लगाया, किसी पे अपना नाम न पाया।
सब कुछ उसका दिया हुआ था, नज़र उठाकर देख लिया॥ काशी० ॥
मन में प्रश्न उठा इक ऐसे, जड़ वस्तु हो चेतन कैसे।
पत्थर की मूरत के आगे, शीश झुका कर देख लिया॥ काशी० ॥
यह मजबूर उमरिया तरसी, अमृत की इक बूंद न बरसी।
चातक है प्यासे का प्यासा, शोर मचा कर देख लिया॥ काशी० ॥
इक दिन मन मन्दिर में देखा चमक उठी सद् ज्ञान की रेखा।
'पथिक' मिला आनन्द प्रभु का, ध्यान लगाकर देख लिया॥ काशी० ॥

[१३]

ईश्वर! तुम्हीं दया करो, तुम बिन हमारा कौन है।
दुर्बलता दीनता हरो, तुम बिन हमारा कौन है॥ १॥
तेरा भजन तेरा मनन, तेरी धुन तेरी लगन।
तेरी शरण हरि शरण, तुम बिन हमारा कौन है॥ २॥
माता तू ही तू ही पिता, बन्धु तू ही तू ही सखा।
केवल तुम्हारा आसरा, तुम बिन हमारा कौन है॥ ३॥
जग को रचाने वाला तू, बिगड़ी बनाने वाला तू।
दुःख को मिटाने वाला तू, तुम बिन हमारा कौन है॥ ४॥
जायें तो जायें हम किधर, कुछ भी नहीं हमें खबर।
तेरी शरण को छोड़कर, तुम बिना हमारा कौन है॥ ५॥

[१४]

मिलता है सच्चा सुख केवल, भगवान् तुम्हारी भक्ति में।
यही विनति है पल पल क्षण क्षण, रहे ध्यान तुम्हारी भक्ति में॥
चाहे वैरी कुल संसार बने, चाहे जीवन मुझ पर भार बने।
चाहे मौत गले का हार बने, रहे ध्यान तुम्हारी भक्ति में॥ १॥
चाहे संकट ने मुझे घेरा हो, चाहे चारों ओर अंधेरा हो।
पर मन न डगमग मेरा हो, रहे ध्यान तुम्हारी भक्ति में॥ २॥
चाहे अग्नि में मुझे जलना हो, चाहे काँटों पर भी चलना हो।
चाहे छोड़ के देश निकलना हो, रहे ध्यान तुम्हारी भक्ति में॥ ३॥
जिह्वा पर तेरा नाम रहे, तेरी याद सुबह और शाम रहे।
यही काम बस आठों याम रहे, रहे ध्यान तुम्हारी भक्ति में॥ ४॥

ओ३म् तेजोऽसि तेजो मयि धेहि, वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि, बलमसि बलं मयि धेहि, ओजोऽस्योजो मयि धेहि, मन्युरसि मन्युं मयि धेहि, सहोऽसि सहो मयि धेहि॥

—यजु० १९.९

[१५]

हे तेजवन्त भगवन्! मेरे में तेज भर दो।
ब्रह्माण्ड-वीर! मुझको भी वीर्यवान् कर दो।
बल-वीरता-विधायक! मुझको बली बना दो।
हे ओज के अधीश्वर! निज ओज से सजा दो।
पुरुषत्व रोष पावन सहने की शक्ति दीजे।
अपने सभी गुणों से परिपूर्ण नाथ कीजे॥

[१६]

प्रभु प्यारे से जिसका सम्बन्ध है,
उसको हरदम आनन्द ही आनन्द है॥ टेक॥

झूठी ममता से करके किनारा, लेके सच्चा प्रभु का सहारा।
जो उसकी रजा में रजामंद है, उसको हरदम आनंद ही आनंद है॥ १ ॥
जिसकी कथनी में कोयल सी चहक है जिसकी करनी में फूलों सी महक है।
प्रेम नरमी ही जिसकी सुगंध है, उसको हरदम आनंद ही आनंद है॥ २ ॥
निन्दा चुगली न जिसको सुहावे, बुरी संगत की रंगत न भावे।
सत्संग ही जिसको पसंद है, उसको हरदम आनंद ही आनंद है॥ ३ ॥
दीन-दुःखियों का दुःख जो मिटावे, बन के सेवक भला सबका चाहे।
नहीं जिसमें घमंड और पाखंड है, उसको हरदम आनंद ही आनंद है॥ ४ ॥

[१७]

ओम् सुखकन्द से सच्चिदानन्द से याचना है,
श्रेयपथ पर चलूँ कामना है।टेक॥

कृत कुकर्मों की जब याद आती, आँखें हैं अश्रुधारा बहाती।
मन में सन्ताप की, घोर अनुताप की वेदना है।
श्रेय पथ पर चलूँ० ॥ १ ॥
पाया नरतन न पर साधना की, कुछ भी न ईश आराधना की।
मन में तृष्णा भरी, काम मद लोभ की वासना है।
श्रेय पथ पर चलूँ० ॥ २ ॥
भक्तजन की सुनो करुण कविता, विश्व दुरितों को हे देव सविता।
दूर कर दीजिये, भद्र भर दीजिये भावना है।
श्रेय पथ पर चलूँ० ॥ ३ ॥
'स्वस्ति पन्थामनु चरेम' मघवन्! सूर्य अरु चन्द्र के तुल्य भगवन्।
दान दूँ, ज्ञान लूँ, अहिंसक बना रहूँ प्रार्थना है।
श्रेय पथ पर चलूँ० ॥ ४ ॥
मैं चलूँ सत्य पथ पर सर्वज्ञाता! कुटिल अघ से स्वयं को बचाता।
मुझको दो आत्मबल, जिससे होवे सफल साधना है।
श्रेय पथ पर चलूँ० ॥ ५ ॥

[१८]

नाम प्रभु का लिया करो, मौज उसी की जिया करो।
अन्दर बहती नाम की धारा, भर भर प्याला पिया करो॥ १॥
सुबह शाम एकान्त जगह पर, ध्यान प्रभु का किया करो।
नौ दरवाजे बन्द करो, चित दशम द्वार में दिया करो॥ २॥
विषयविकारों से मन काढो, द्वीदल में धर लिया करो।
रात दिनों अविरल बहती जो, नाम की हाला पिया करो॥ ३॥
सारे तन से खेंच चेतना, माथे में धर लिया करो।
मधुर धार अमृतरस बरसे, उसमें जीभर नहाया करो॥ ४॥
नित तुम आनन्दित होकर, खुद को पुष्पित किया करो।
अन्तर की जगमग ज्योति से रोमांचित तुम हुआ करो॥ ५॥
धीरे धीरे गहन अवस्था, अन्दर की कर लिया करो।
अन्तर से अन्तर में जाकर, ध्यान गहन में किया करो॥ ६॥
बाहर भीतर आनन्द बहता, उसको तुम नित पिया करो।
इसी तरह ईश्वर मिलने की, सफल यात्रा किया करो॥ ७॥
नाम प्रभु का लिया करो, मौज उसी की जिया करो।
अन्दर बहती नाम की धारा, भर भर प्याला पिया करो॥ ८॥

(चैतन्यमुनि वानप्रस्थ)

[१९]

वेला अमृत गया, आलसी सो रहा, बन अभागा।
साथी सारे जगे, तू न जागा॥ टेक॥
झोलियाँ भर रहे भाग्य वाले, लाखों पतितों ने जीवन संभाले।
रंक राजा बने, भक्तिरस में सने, कष्ट भागा॥ १॥ साथी........
कर्म उत्तम थे, नरतन जो पाया, आलसी बनके हीरा गंवाया।
उल्टी हो गई मति, करके अपनी क्षति, रोने लागा॥ २॥ साथी.......
धर्म वेदों का देखा न भाला, वेला अमृत गया, न सम्भाला।
सौदा घाटे का कर, हाथ माथे पै धर, रोने लागा॥ ३॥ साथी........
'देश' तूने न अब भी विचारा, सिर से ऋषियों का ऋण न उतारा।
हंस का रूप था, गदला पानी पिया, बनके कागा॥ ४॥ साथी.......

[२०]

रहा सोया युगों से मैं, मेरे भगवन्! जगा देना।
दया करना मुझे भी तुम, सही पथ पर लगा देना॥
रहा भटकन में हे भगवन्! मुझे तो राह नहीं पाई।
रहा डूबा मैं विषयों में, मुझे तो थाह नहीं पाई।
निकालो अब तो भटकन से, विषयों की चाह भगा देना॥ १ ॥
हटा अज्ञान की निद्रा, मुझे कुछ ज्ञान दे देना।
रहूँ कैसे मैं दुनिया में, मुझे विज्ञान दे देना।
वेद-उपदिष्ट मारग जो, उसी पथ पर लगा देना॥ २ ॥
अनेकों मार्ग योगों के, मगर अनभिज्ञ हूँ उनसे।
कहाँ जाऊँ किधर जाऊँ, मैं पूछूँ, कौन है? ज़िससे।
जहाँ कल्याण हो मेरा, उसी रथ पर चढ़ा देना॥ ३ ॥
दया कुछ और कर देना, मेरा उद्धार करने की।
बड़ा विकराल भवसागर, उसी को पार करने की।
दया कर अपनी भक्ति में, मुझे भगवन् लगा देना॥ ४ ॥
रहा सोया युगों से मैं, मेरे भगवन्! जगा देना।
दया करना मुझे भी तुम, सही पथ पर लगा देना॥ ५ ॥

(चैतन्य मुनि वानप्रस्थ)

[२१]

मानव सोचो जग के सुख का, विस्तार रहेगा कितने दिन!
यह मान रहेगा कितने दिन, सम्मान रहेगा कितने दिन॥
चाहे पितु हो या माता हो, पत्नी हो सुत या भ्राता हो।
जिनको अपना कहते उन पर, अधिकार रहेगा कितने दिन॥
मानव० ॥ १ ॥
कोई आता है कोई जाता है, थोड़े दिन का यह नाता है।
जिसका भी आश्रय लेते, वह आधार रहेगा कितने दिन॥
मानव० ॥ २ ॥
जग में जो सच्चे ज्ञानी हैं, परमात्म-तत्त्व के ध्यानी हैं।
इनसे पूछो मन का माना, संसार रहेगा कितने दिन॥
मानव० ॥ ३ ॥
तुम प्रेम करो अविनाशी से, मिल जाओ उस उरवासी से।
ए 'पथिक'! यहाँ मैं मेरे का, व्यापार रहेगा कितने दिन॥
मानव० ॥ ४ ॥

[२२]

फिर मत कहना कुछ कर न सके॥
जब नरतन तुम्हें निरोग मिला,
सत्संगति का भी योग मिला।
फिर भी प्रभुकृपा अनुभव करके,
यदि भवसागर तुम तर न सके॥
फिर मत० ॥ १ ॥

तुम सत्य-तत्त्वज्ञानी होकर,
तुम सद्धर्मी ध्यानी होकर।
तुम सरल निरभिमानी होकर,
कामना-विमुक्त विचर न सके॥
फिर मत० ॥ २ ॥

जग में जो कुछ भी पाओगे,
सब यहीं छोड़ कर जाओगे।
पछताओगे यदि तुम अपना,
पुण्यों से जीवन भर न सके॥
फिर मत० ॥ ३ ॥

जो सुखसम्पत्ति में फूल रहे,
जो वैभव-मद में भूल रहे।
उनसे फिर पाप डरेंगे क्यों,
जो परमेश्वर से डर न सके॥
फिर मत० ॥ ४ ॥

जब अन्तसमय आ जायेगा,
तब क्या तुमसे बन पायेगा।
यदि समय-शक्ति रहते ही,
आचार-विचार सुधर न सके॥
फिर मत० ॥ ५ ॥

होता तब तक न सफल जीवन,
है भाररूप सब तन मन धन।
यदि तुम प्रेम पथ पर चलकर,
जीवन में परदुःख हर न सके॥
फिर मत० ॥ ६ ॥

[२३]

अब मत झूठे गाने गाओ और मत झूठे साज सजाओ।
अन्दर के नित बाजे बजते, दिव्य अलौकिक साज सजाओ॥
मत बैठो प्रतीक्षा में, कोई और तुम्हारा गान सुनेगा।
सभा जुड़ेगी, मान बढ़ेगा, कोई तेरा सम्मान पढ़ेगा।
इन मानों में कुछ नहीं रखा, इनसे तो अभिमान बढ़ेगा।
बारहवर्ती वृत्ति होगी, और अधिक व्यवधान बढ़ेगा।
निर्जन स्थली, एक एकाकी, अन्तस्तल में गुम हो जाओ॥ १॥
भूतकाल की छाया छोड़ो, मत भविष्य से आस लगाओ।
केवल वर्त्तमान में जीकर, अब तुम अपना भाग्य बनाओ।
भूत छवी दर्पण की मेटो, न्यारी अपनी ज्योति जलाओ।
उस ज्योति में जो कुछ देखो, उसकी अद्भुत गाथा गाओ।
बिन वादक जो बजते बाजे, उनको ढूँढ़ो ध्यान लगाओ॥ २॥
परमेश्वररूपी पर्वत से, आनन्द रस की धारा बहती।
उस सरिता में एक अलौकिक, दिव्य निराली अमृत रहती।
उस अमृत में जो न्हाया है, उसका ही निस्तार हुआ है।
वही तीर्थ है, वही धाम है, उसमें नहाके पार हुआ है।
भौतिक नदियों में न्हाने से, पार हुआ है कौन बताओ॥ ३॥
अब मत झूठे गाने गाओ और मत झूठे साज सजाओ।
अन्दर के नित बाजे बजते, दिव्य अलौकिक साज सजाओ॥

(चैतन्य मुनि वानप्रस्थ)

[२४]

वेद को पढ़ना पढ़ाना चाहिये,
वेद को सुनना सुनाना चाहिये॥ टेक॥
वेद के अनुकूल ही हे आर्यो!
आचरण अपना बनाना चाहिये॥ १॥
यज्ञ उत्सव धार्मिक सत्संग में,
नित सहित परिवार आना चाहिये॥ २॥
छल कलह से पूर्ण वातावरण में,
प्रेम की गंगा बहानी चाहिये॥ ३॥
होके अब आरूढ़ निज कर्त्तव्यपथ पर,
कुछ तो ऋषि का ऋण चुकाना चाहिये॥ ४॥
मत भलाई तुम किसी की भूलना,
हाँ! भला कर भूल जाना चाहिये॥ ५॥
लाभ कहने से न कुछ होगा 'प्रकाश',
कार्य कुछ करके दिखाना चाहिये॥ ६॥

[२५]

प्रभो! वेदवीणा बजे विश्वभर में,
सुनें मन्त्र झंकार प्रत्येक घर में॥ टेक॥
लिये प्रेमपीयूष मिल प्रीति से सब,
करे स्नान संसार शुभ स्नेह-सर में॥ १॥
बंधे विश्व बन्धुत्व की शृंखला में,
बहे रक्त, रंजित व धरणी समर में॥ २॥
सभी राष्ट्र होवें स्वराज्याधिकारी,
बली निर्बलों को न जकड़ें स्व-कर में॥ ३॥
उगे व्योम में वेद का दिव्य भानु,
खिलें पुण्य-पंकज मनो-मान-सर में॥ ४॥
पताका उड़े 'ओम्' की व्योम में फिर,
बहे विश्व स्वाधीनता की लहर में॥ ५॥
अमर शान्ति का गान गूंजे गगन में,
सुधा सी बरसने लगे सप्तस्वर में॥ ६॥
यही कामना थी दयानन्द ऋषि की,
यही गूंज उनके थी प्रत्येक स्वर में॥ ७॥

[२६]

वेदों का डंका आलम में, बजवा दिया ऋषि दयानन्द ने।
हर जगह ओ३म् का झण्डा फिर, फहरा दिया ऋषि दयानन्द ने॥
अज्ञान अविद्या की हरसूँ, घनघोर घटाएँ छाई थीं।
कर नष्ट उन्हें जग में प्रकाश, फैला दिया ऋषि दयानन्द ने॥ १॥
सिर पर तूफान बला का था, नजरों से दूर किनारा था।
बन कर मल्लाह किनारे पर, पहुँचा दिया ऋषि दयानन्द ने॥ २॥
घुस गये लुटेरे घर में थे, सब माल लूटकर ले जाते।
सोने वालों का हाथ पकड़, बिठला दिया ऋषि दयानन्द ने॥ ३॥
मक्कारी दगा फरेबों से, जो माल मुफ्त का खाते थे।
सब पोल खोलकर दिल उनका, दहला दिया ऋषि दयानन्द ने॥ ४॥
उड़ गये होश मतवालों के, मैदान छोड़कर भाग गये।
हथियार तर्क का जब निकाल, चमका दिया ऋषि दयानन्द ने॥ ५॥

कई कबरों में सिर को पटकते थे, दौड़े दौड़े जो फिरते थे।
दे ज्ञान उन्हें मुक्ति का मार्ग, दिखला दिया ऋषि दयानन्द ने॥ ६॥
करते थे हमेशा चीख चीख, तौहीन जो पावन वेदों की।
शिर उनका वेदों के आगे, झुकवा दिया ऋषि दयानन्द ने॥ ७॥
सब छोड़ चुके थे धर्म कर्म, गौरव गुमान ऋषि मुनियों का।
फिर सन्ध्या-हवन यज्ञ करना, सिखला दिया ऋषि दयानन्द ने॥ ८॥
विद्यालय गुरुकुल खुलवाये, कायम हर जगह समाज किये।
आदर्श पुरातन शिक्षा का, सिखला दिया ऋषि दयानन्द ने॥ ९॥
बलिदान किया बलिवेदी पर, जीवन 'प्रकाश' हँसते हँसते।
सच्चे रहबर बन कर सबको, चेता दिया ऋषि दयानन्द ने॥ १०॥

[२७]

थे न मठ-मन्दिर हवेली हाट ठाट बाट,
सोना चाँदी कहाँ पास पैसा था न धेला था।
तन पे न थे सुवस्त्र, हाथ में न अस्त्र-शस्त्र,
जोगी, न जमात कोई चेली थी न चेला था।
सत्य की सिरोही से, संहारे सब असत् मत,
संकट विकट मरदानगी से झेला था।
सारी दुनिया के लोग, एक ओर थे 'प्रकाश'।
एक ओर दयानन्द निर्भय अकेला था॥

[२८]

दयानन्द के वीर सैनिक बनेंगे,
दयानन्द का काम पूरा करेंगे।
उठाये ध्वजा धर्म की हम फिरेंगे,
उसी के लिये हम जियेंगे मरेंगे॥
दयानन्द० ॥ १॥

उजाड़ेंगे शहरों को जंगल बसाकर,
दिखायेंगे दुनिया सुहानी बनाकर।
वहाँ भद्र ही भद्र सब ओर होगा,
दुरितों को फिर से फटकने न देंगे॥
दयानन्द० ॥ २॥

न चोर होगा न कंजूस होगा,
न मद्यपायी जुआरी न होगा।
न ढोंग होगा न पाखण्ड होगा,
न कोई हिंसा किसी की करेंगे॥
दयानन्द० ॥ ३ ॥

सभी ब्रह्मचारी पहले वयस् में,
गृहस्थधर्मी तब ही बनेंगे।
वनस्थधर्मी तपस्या के हेतु,
वैराग्यवाले यती भी बनेंगे॥
दयानन्द० ॥ ४ ॥

सभी यज्ञकर्त्ता सभी दानकर्त्ता,
सभी योगकर्त्ता व स्वाध्यायकर्त्ता।
सभी दुःखहर्त्ता व आनन्ददाता,
सभी ईशभक्ति सदा ही करेंगे॥
दयानन्द० ॥ ५ ॥

सभी वेदपाठी सभी सत्यवादी,
सभी शुद्धभोजी स्वकर्त्तव्यकारी।
सभी पथ्यसेवी संयमी सुहासी,
आतिथ्यकारी महाशय बनेंगे॥
दयानन्द० ॥ ६ ॥

न छुआछूत होगी न जन्मों से जाति,
गुणकर्म से ही बनेगी प्रजाति।
सभी की परस्पर बढ़ायेंगे प्रीति,
नारी-समादर सभी नर करेंगे॥
दयानन्द० ॥ ७ ॥

राज्याधिकारी सभी धर्मशाली,
प्रजा पालने में समुत्साह-धारी।
न द्रव्यलोभी न भ्रष्टचारी,
दूर व्यसनों से सभी जन रहेंगे॥
दयानन्द० ॥ ८ ॥

[२९]

जन्मदिन पर

जन्मदिन आज फिर आया बधाई हो बधाई हो।
खुशी का रंग है छाया, बधाई हो बधाई हो॥
हवन से है सुगन्धित हो गया वातावरण सारा।
ऋचाएँ वेद की बोली गईं गूँजा गगन सारा।
यह दिन ईश्वर ने दिखलाया, बधाई हो बधाई हो॥ १॥
जन्मदिन०॥

यहाँ बैठे पड़ौसी हैं यहीं बैठे हैं सम्बन्धी।
यहाँ कहकहे उठते, यहीं फैली है सुगन्धी।
सभी ने प्रेम से गाया, बधाई हो बधाई हो॥ २॥
जन्मदिन०॥

जिधर देखो उधर मिलते नज़ारे ही नज़ारे हैं।
दिलों में फूट निकले आज खुशियों के फव्वारे हैं।
बाग परिवार लहराया, बधाई हो बधाई हो॥ ३॥
जन्मदिन०॥

जिये सौ साल तू राजा, रहे खुशहाल जीवन में।
बहारें झूम के आयें तुम्हारे दिल के आंगन में।
रहे मन खूब हर्षाया, बधाई हो बधाई हो॥ ४॥
जन्मदिन०॥

करे विद्या ग्रहण इतनी कि जग में नाम हो रोशन।
जहाँ में चाँद सूरज की तरह, हर काम हो रोशन।
बुजुर्गों का रहे साया, बधाई हो बधाई हो॥ ५॥
जन्मदिन०॥

हृदय अन्दर सचाई हो, मधुर वाणी सदा बोले।
धर्म की राह पर चलते हुए, तिल भर नहीं डोले।
'पथिक' नीरोग हो काया, बधाई हो बधाई हो॥ ६॥
जन्मदिन०॥

[३०]

ओम् की बोलो जय जयकार, बधाई होवे।
पहली बधाई परमेश्वर को होवे, जिन्होंने रचा ये संसार॥ बधाई०
दूजी बधाई दादा दादी को होवे, जिनका बढ़ा ये परिवार॥ बधाई०
तीजी बधाई माता-पिता को होवे, जिनकी खुशियाँ है अपार॥ बधाई०
चौथी बधाई नाना नानी को होवे, जिन्होंने दिया पूरा प्यार॥ बधाई०
पाँचवी बधाई चाचा चाची को होवे, जिन्होंने किया लाड़ दुलार॥ बधाई०
छठी बधाई मामा मामी को होवे, जिनका आशीष बारम्बार॥ बधाई०
सातवीं बधाई सारी संगत को होवे, जिन्होंने गाया मंगलाचार॥ बधाई०

[३१]

चिर जीवे ये लाल, बालक चिर जीवे।
विद्या के भूषण को धारे, विनयी बने सुजान॥ बालक० ॥
मातपिता की आज्ञा माने, अच्छी चले ये चाल॥ बालक० ॥
सदाचार का कोष बढ़ाके, पावे सम्पदा अपार॥ बालक० ॥
ईशभक्ति नित्य करे ये, करके पर उपकार॥ बालक० ॥
वेद पढ़े शुभ कर्म कमावे, करे वेद प्रचार॥ बालक० ॥
धर्म पर आरूढ़ रहे ये, करे धर्म-प्रचार॥ बालक० ॥
हम सबकी आशीष यही है, जीवे सौ सौ साल॥ बालक० ॥

[३२]

यजमान को आशीर्वाद

भगवन् इस परिवार को, सुख का सदा वरदान दो।
ज्ञान की गंगा बहाकर, शुद्ध वैदिक ज्ञान दो।
नीरोग होकर सब जियें, शतवर्ष आयुष्मान् हों।
धनधान्य से पूरित सदा, तेजस्वी हों विद्वान् हों॥
पुत्र पौत्रादिसहित, बलवान् हों धर्मात्मा धीमान् हों॥

[३३]

सदा फूलता फलता भगवन्! यह याजक-परिवार रहे।
रहे प्यार जो किसी से इनका, सदा आपसे प्यार रहे॥
मिथ्या कर अभिमान कभी न, जीवन का अपमान करें।
देवजनों की सेवा करके, वेदामृत का पान करें।
प्रभु! आपकी आज्ञा-पालन, करता हर नरनार रहे॥ १॥
सदा० ॥

मिले सम्पदा जो भी इनको, उसको मानें आपकी।
घड़ी न आने पावे इन पै, कोई भी सन्ताप की।
यही कामना प्रभु आपसे, कर हम बारम्बार रहे॥ २॥
सदा०॥

दुनियादारी रहे चमकती, धर्म निभाने वाले हों।
सेवा के साँचे में सबने, जीवन अपने ढाले हों।
बच्चा बच्चा परिवार का, बनकर श्रवणकुमार रहे॥ ३॥
सदा०॥

बने रहें सन्तोषी सारे, जीवन के हर काल में।
हाल-चाल हो कैसा इनका, रहें मस्त हर हाल में।
ताकि 'देश' बसाया इनका, सुखदायी संसार रहे॥ ४॥
सदा०॥

ओम्-सङ्कीर्तन

[रचयिता—स्व० डॉ० विश्वामित्र जी, गौरीबिदनूर निवासी]*

अनन्त-गुण-गण-भूषित ओम्॥ टेक॥

अग्नि-शनैश्चर-तैजस ओम्, अग्न्यादिक-ऋषिपूजित ओम्।
अचलरूप-सञ्चालक ओम्, अचिन्त्य-विश्वपितामह ओम्।
अजरामर-पवित्रतम ओम्, अज-होता, प्रपितामह ओम्।
अज्ञानादिक-रिपुहर ओम्, अत्ता, स्वराट्, कूटस्थ ओम्।
अद्भुत तेजो बलयुत ओम्, अनन्त-गुण-गण-भूषित ओम्॥ १॥
अद्वैतास-गरुत्मान् ओम्, अधमोद्धारक ऋषिवर ओम्।
अनुपम-सत्य-गुणाकर ओम्, अन्तर्यामी सवितर् ओम्।
अन्नान्नाद आदित्य ओम्, अर्यमाऽऽकाश-भगवान् ओम्।
अर्य-वरेण्य इन-शुक्र ओम्, आत्मानादिरुरुक्रम ओम्।
आत्मिकबल सन्दायक ओम्, अनन्त-गुण-गण-भूषित ओम्॥ २॥

---

* इस ओम्-सङ्कीर्तन में लगभग ३८ पंक्तियों की अभिवृद्धि की गई है, जिससे प्रथम समुल्लास में व्याख्यात सभी ईश्वर-नाम इसमें संगृहीत हो सकें। व्याकरणानुसार कुछ परिवर्त्तन और पंक्तियों का वर्णानुक्रम भी सुविधा की दृष्टि से किया गया है।

आनन्दामृत-वर्षक ओम्, आर्त्तत्राण-परायण ओम्।
इन्द्र-बृहस्पति-नामक ओम्, ईक्षित-सृष्टिविधायक ओम्।
उक्षितरक्षक-शिक्षक ओम्, उद्बोधित-हृद्वर्धक ओम्।
ऋतुपरिवर्त्तन-कारण ओम्, ऋतुमूलक-हितदायक ओम्।
ओजःप्रद ओजोमय ओम्, अनन्त-गुण-गण-भूषित ओम्॥ ३ ॥
कर्माश्रित फलदायक ओम्, कविर्मनीषी राष्ट्रिन् ओम्।
कालात्मक-परमेश्वर ओम्, क्लेशविमुक्त-विशेषण ओम्।
क्षोभरहित-नभ-नामक ओम्, गणपति-सिद्ध-विनायक ओम्।
गायत्री-गणनायक ओम्, गुर्वाचार्य-महेश्वर ओम्।
चित्र-विचित्र-महातुथ ओम्, अनन्त-गुण-गण-भूषित ओम्॥ ४ ॥
जगन्नियन्ता पालक ओम्, जनता दुःख-विभञ्जक ओम्।
जन्मरहित-जन्मप्रद ओम्, जल-चन्द्र-मातरिश्वन् ओम्।
ज्ञानरूप-सत्प्रेरक ओम्, ज्ञानसूर्य-विस्तारक ओम्।
तनुपालक आयुर्दा ओम्, तेजःप्रद तेजोमय ओम्।
त्यागयुक्त-नर-भद्रद ओम्, अनन्त-गुण-गण-भूषित ओम्॥ ५ ॥
दयालु-दण्डविधायक ओम्, दानरहित-नर-नाशक ओम्।
दारिद्र्यादि-विनाशक ओम्, देवादिक-ऋण-मोचक ओम्।
देहि सुबुद्धिं शिवतर ओम्, दैहिक रोग-निवारक ओम्।
धर्मराज-वसु-मनु-यम ओम्, धर्माऽधर्म-सुशिक्षक ओम्।
नित्यतृप्त-सर्वाश्रय ओमं, अनन्त-गुण-गण-भूषित ओम्॥ ६ ॥
नित्य-निरञ्जन-निरुपम ओम्, निराकार-जगदाश्रय ओम्।
निर्गुण-सगुण-निराश्रय ओम्, निर्मल-नायक-शर्मद ओम्।
निर्विकार-सम-रसमय ओम्, निश्चितमित्र-निजाश्रय ओम्।
न्यायोचित-धन-सुखदा ओम्, परमात्मा नारायण ओम्।
परमैश्वर्य-सुदायक ओम्, अनन्त-गुण-गण-भूषित ओम्॥ ७ ॥
पापनिवारक-मोक्षद ओम्, पाहि निरन्तर-पूषण ओम्।
पुण्यचरित-पुरुषोत्तम ओम्, प्रजापति-वरुण-वीरद ओम्।
प्रलयानन्तर-सुस्थित ओम्, प्राण-दक्ष-सन्दायक ओम्।
प्राणसृष्टि-सञ्चालक ओम्, प्रियवर-परमसहायक ओम्।
बन्धु-विप्र-देवाक्षर ओम्, अनन्त-गुण-गण-भूषित ओम्॥ ८ ॥

ब्रह्मा, दिव्य-कुबेर ओम्, भक्तप्रिय-सुखदायक ओम्।
भवभय-भञ्जन-भेषज ओम्, भूमि-शक्ति-धीप्रेरक ओम्।
भूर्भुवः स्वर् वागीश ओम्, मङ्गलमूल-मयोभव ओम्।
मन्युरूप-मन्युप्रद ओम्, मर्माच्छादक-चिन्मय ओम्।
महादेव-केतु-शेष ओम्, अनन्त-गुण-गण-भूषित ओम्॥ ९॥
मातृकला-परिपोषक ओम्, मानवलक्ष्य-महाश्रय ओम्।
मानव-रोग-विनाशक ओम्, मुक्त-बुद्ध-राहु-सूर्य ओम्।
मृत्युरूप-संशोधक ओम्, रसवाहक-सर्वेश्वर ओम्।
रुद्र-भीम-भयवारक ओम्, लक्ष्मी पृथिवी श्री-जन ओम्।
लोकाखिल-गतिदायक ओम्, अनन्त-गुण-गण-भूषित ओम्॥ १०॥
लोभादिक-रिपु-दाहक ओम्, वायु-विराट् खं विक्रम ओम्।
विद्वज्जन-मति-नोदक ओम्, विद्वेषादिक-भञ्जक ओम्।
विश्वामित्र-वैश्वानर ओम्, विश्वविनोदक-विभुवर ओम्।
विश्वावसु-विश्वरूप ओम्, विष्णु-धियावसु-दूतिवर ओम्।
विस्तृत-शान्ति-विधायक ओम्, अनन्त-गुण-गण-भूषित ओम्॥ ११॥
वीर्यरूप-वीर्यप्रद ओम्, वेद-चतुष्टय-दायक ओम्।
व्यापक-यज्ञ-सुयाजक ओम्, व्याहृति-लोकविभाजक ओम्।
व्रतपालक-विश्वेश्वर ओम्, शङ्कररूप-मयस्कर ओम्।
शमद-प्राज्ञ-सुनामक ओम्, शुभयज्ञ-स्वीकारक ओम्।
शुद्ध-ब्रह्म-परात्पर ओम्, अनन्त-गुण-गण-भूषित ओम्॥ १२॥
श्रद्धाप्रद-श्रद्धामय ओम्, श्रेयःप्राप्ति-सुसाधक ओम्।
श्रोत्रादीन्द्रिय-शक्तिद ओम्, सकल-द्रव्य-व्यापक ओम्।
सकल-वृद्धिसिद्धिप्रद ओम्, सच्चिदानन्द-लक्षण ओम्।
सज्जन-सम्मत-सौख्यद ओम्, सत्पथदर्शी-पुरोहित ओम्।
सत्य सनातन-धर्मद ओम्, अनन्त-गुण-गण-भूषित ओम्॥ १३॥
सत्यसुखात्मक-सर्वद ओम्, सत्सङ्कल्प-सुपूरक ओम्।
सभ्यसभा-प्रतिभाप्रिय ओम्, सरस्वती देवी मह ओम्।
सर्वकार्य-सम्पादक ओम्, सर्वजगत्-कर्त्ता बुध ओम्।
सर्वन्यून-सुपूरक ओम्, सर्वशक्तिमान्, गणेश ओम्।
सर्वाधार-वरेश्वर ओम्, अनन्त-गुण-गण-भूषित ओम्॥ १४॥

सर्वानन्द-सुसाधक ओम्, सहःस्वरूप-सहःप्रद ओम्।
साधन-साध्य-सुयोजक ओम्, साम्राज्यार्क-विकाशक ओम्।
सुपर्ण-न्यायकारिन्! ओम्, सुरसम्पूजित-सुरवर ओम्।
सूक्ष्माच्छेद्य-महत्तम ओम्, सूर्यादिक-कृति-धारक ओम्।
सृष्टि-स्थिति-लय-कारक ओम्, अनन्त-गुण-गण-भूषित ओम्॥ १५ ॥
स्थावर-जङ्गम-रक्षक ओम्, स्नायुरहित-परमध्रुव ओम्।
स्नेहिपिता सूपायन ओम्, स्नेहिलमाता भवशम ओम्।
स्वयम्भू-हिरण्यगर्भ ओम्, स्वस्तिद-नाशनिवारक ओम्।
हर्षितमति-सन्धारक ओम्, हे सर्वान्तर्यामिन् ओम्।
होमार्पित-हुत-भेदक ओम्, अनन्त-गुण-गण-भूषित ओम्॥ १६ ॥

कठिन नामों के अर्थ

अग्निः=ज्ञानस्वरूप, सर्वज्ञ, जानने, प्राप्त होने और पूजा करने योग्य। **शनैश्चरः**=अत्यन्त धैर्यवान् और संसार के धैर्य का कारण। **तैजसः**=स्वयं-प्रकाश और सूर्यादिक तेजस्वी लोकों को प्रकाशित करने वाला। **विश्वः**=जिसमें आकाशादि सब भूत प्रवेश कर रहे हैं अथवा जो इनमें व्याप्त होके प्रविष्ट हो रहा है। **अजः**=सृष्टि बनाने के लिये प्रकृति के अवयव आकाशादि भूत परमाणुओं को यथायोग्य मिलाने वाला, शरीर के साथ जीवों का सम्बन्ध करके उन्हें जन्म देने वाला और स्वयं कभी नहीं जन्मने वाला। **होता**=जीवों को देने योग्य पदार्थों का देने वाला और ग्रहण करने योग्य पदार्थों का ग्रहण करने वाला। **अत्ता**=जड़-चेतन सब जगत् को अपने भीतर रखने वाला, सबको ग्रहण करने वाला। **स्वराट्**=स्वयं प्रकाशस्वरूप। **कूटस्थः**=सब व्यवहारों में प्राप्त होकर भी अपने स्वरूप को कभी नहीं बदलने वाला, लेशमात्र भी विकारयुक्त न होने वाला। **अद्वैत**=द्वैतभाव से रहित अर्थात् सजातीय, विजातीय और स्वगत इन तीनों भेदों से रहित। **आप्तः**=सब धर्मात्माओं को स्वव्याप्ति से प्राप्त होने वाला तथा सब धर्मात्माओं के द्वारा प्राप्त होने योग्य। **गरुत्मान्**=महान् आत्मा वाला अर्थात् महान् स्वरूप वाला। **गुणाकर**=गुणों की खान, गुणियों में सर्वोकृष्ट गुण वाला। **अन्तर्यामी**=सब जगत् के भीतर व्यापक होकर उसका नियन्त्रण करने वाला **अन्नम्**, **अन्नादः**=सब जगत् को अपने भीतर रखने

वाला। **आदित्यः**=कभी विनाश को प्राप्त न होने वाला, अखण्ड। **अर्यमा**=सत्यन्यायकर्त्ता मनुष्यों का मान्य करने वाला तथा सबके पाप-पुण्यादि कर्मों और उनके फलों का यथावत् नियमन करने वाला। **आकाशः**=सब ओर से सब जगत् को प्रकाशित करने वाला। **अर्यः**=सर्वत्र गति में समर्थ, सबका स्वामी। **इनः**=सबसे योग्य, समर्थ स्वामी। **शुक्रः**=अत्यन्त पवित्र और स्वव्याप्ति से जीवों को भी पवित्र करने वाला, अति देदीप्यमान। **आत्मा**=सब जीवादि जगत् में निरन्तर व्यापक रहने वाला। **उरुक्रमः**=अनन्त पराक्रम वाला। **आर्त्तत्राणपरायणः**=दुःखियों की रक्षा में तल्लीन। **इन्द्रः**=सम्पूर्ण ऐश्वर्य वाला। **उक्षितरक्षकः**=गर्भों का रक्षक। **कविः**=सर्वविद्याओं का ज्ञाता और वेद द्वारा सब विद्याओं का उपदेश करने वाला। **मनीषी**=सब जीवों की मनोवृत्ति का ज्ञाता। **राष्ट्री**=समस्त ब्रह्माण्डरूपी राष्ट्र का अधिपति। **कालः**=जगत् के सब पदार्थों और जीवों की संख्या का ज्ञाता। **नभः**=पापियों को बन्धन में डालने वाला, दुष्टों का हिंसक। **विनायकः**=विशेषरूप से सबका नेतृत्व करने वाला। **गायत्री**=भक्तिगान का मुख्य लक्ष्य, गाने वाले का रक्षक। **चित्रः**=अद्भुत गुण-कर्म-स्वभाव वाला। **जलम्**=दुष्टों का ताड़न करने वाला, अव्यक्त परमाणुओं का अन्योन्य संयोग-वियोग करने वाला। **चन्द्रः**=स्वयं आह्लादमय (आनन्द-स्वरूप) और सबको आह्लादित करने वाला। **मातरिश्वा**=वायु के समान अत्यन्त बलवान्, अपने स्वरूप में सदा प्रवृद्ध (पूर्ण)। **वसुः**=आकाशादि सब पदार्थों को अपने अन्दर बसाने वाला और स्वयं इन सबमें वास करने वाला। **मनुः**=स्वयं विज्ञानशील और अन्यों के द्वारा मनन करने योग्य। **यमः**=सब प्राणियों को कर्मफल देने की व्यवस्था करने वाला और सब अन्यायों से पृथक् रहने वाला। **निरञ्जनः**=आकृति, म्लेच्छाचार, दुष्ट कामना और चक्षु आदि इन्द्रियों के विषयों के पथ से पृथक् रहने वाला। **निर्गुणः**=जगत् जीव के अनीश्वर गुणों से रहित। **सगुणः**=सर्वज्ञतादि गुणों से युक्त। **निराश्रयः**=किसी अन्य का सहारा न लेने वाला। **शर्मदः**=सुख और आश्रयस्थान का दाता। **समः**=सबके प्रति समान भाव रखने वाला, सर्वदा एकरसमय। **नारायणः**=जड़-चेतन जगत् रूपी निवास-स्थान वाला। **वरुणः**=धर्मात्माओं को मोक्षादि के लिये स्वीकार करने वाला, धर्मात्माओं के द्वारा वरण (स्वीकार) किया जाने वाला, सर्वश्रेष्ठ। **वीरदः**=वीर सन्तान आदि का दाता।

प्राणः=सब प्राणियों के जीवन का मूल। **दक्षः**=स्वकार्यों में अतिनिपुण, शीघ्रकारी। **सन्दायकः**=उत्तम दाता। **विप्रः**=महाज्ञानवान्, ज्ञानदान से विशेषरूप से जीवों को पूर्ण करने वाला। **अक्षरम्**=कभी विनष्ट न होने वाला, सर्वत्र व्याप्त रहने वाला। **कुबेरः**=अपनी व्यापकता से सबको ढकने वाला। **भवभयभञ्जनः**=सांसारिक भयों का नाशक। **भेषजः**=सबका असली चिकित्सक। **भूमिः**=जिसमें सब प्राणी होते हैं (=स्वसत्ता को स्थिर रखते हैं) वह परमेश्वर। **शक्तिः**=सब जगत् के बनाने में समर्थ। **वागीशः**=वाणी का स्वामी, वेदविद्या का अधिपति। **मयोभवः**=सुखों की प्राप्ति का मूल कारण। **मन्युप्रदः**=पापविनाश के लिये आवश्यक सुक्रोध का दाता। **चिन्मयः**=चेतन। **केतुः**=सब जगत् का निवास-स्थान, स्वयं सब रोगों से रहित तथा मुक्त जीवों को रोगों से रहित रखने वाला। **शेषः**=उत्पत्ति और प्रलय आदि सांसारिक विकारों से शेष (बचा) रहने वाला। **मातृकलापरिपोषकः**=गर्भवती माता के शरीर की रक्तधरा, श्लेष्मधरा आदि कलाओं (शरीरावयवों) को पुष्टि प्रदान करने वाला। **बुद्धः**=सदा सबको जानने वाला। **राहुः**=एकान्तस्वरूप अर्थात् जिसके स्वरूप में दूसरा पदार्थ संयुक्त न हो वह दुष्टों का त्याग करने और अन्यों से करवाने वाला। **रुद्रः**=दुष्ट कर्म करने वालों को रुलाने वाला। **लक्ष्मीः**=जड़-चेतन जगत् को देखने वाली, सब पदार्थों को अनेक चिह्नों से युक्त करने वाली, वेदादिशास्त्र तथा धार्मिक विद्वान् योगियों का लक्ष्य। **पृथिवी**=सब जगत् का विस्तार करने वाली। **श्रीः**=जिसका सेवन सब जगत्, विद्वान् और योगीजन करते हैं वह ईश्वर। **जनः**=सबको जन्म देने वाला। **वायुः**=जड़-चेतन जगत् का धारण, जीवन और प्रलय करने वाला तथा बलवानों में बलिष्ठ। **खम्**=आकाश की तरह व्यापक। **वैश्वानरः**=सब जीवों को स्वलक्ष्य तक पहुँचाने वाला, सब जीवों में प्रकाशमान, सब भूतों में प्राप्त। **विभुवरः**=व्यापक पदार्थों में श्रेष्ठ। **विश्वावसुः**=सम्पूर्ण विश्व को बसाने वाला, सम्पूर्ण धन का स्वामी। **विश्वरूपः**=संसार को रूपयुक्त करने वाला। **विष्णुः**=जड़-चेतन जगत् में व्याप्त होने वाला। **धियावसुः**=अपने ज्ञान और कर्म के साथ सर्वत्र बसने वाला, स्वज्ञान और कर्म से पदार्थों को स्थायित्व प्रदान करने वाला। **द्वतिवरः**=अविद्या तथा दुःख का निवारण करने वालों में श्रेष्ठ। **वीर्यरूपः**=अनन्त पराक्रमशाली। **व्याहृतिलोक-विभाजक**=भूः भुवः आदि व्याहृतियों

और तदनुसार लोकों का सुविभाग करने वाला। **शङ्करूपः**=शान्तिकारक स्वरूप वाला **मयस्करः**=सुखकारी। **शमदः**=शान्तिप्रदाता। **सुनामकः**=ओम् अग्नि आदि उत्तम नामों वाला। **परात्परः**=सर्वोच्च, सर्वश्रेष्ठ। **सत्पथदर्शः**=उत्तम पथ का दिखाने वाला। **सरस्वती**=विविध विज्ञान अर्थात् शब्द-अर्थ-सम्बन्ध-प्रयोग के ज्ञान से सम्पन्ना। **महः**=सबसे बड़ा, सबका पूज्य। **बुधः**=स्वयं बोधमय और सब जीवों के बोध का कारण। **वरेश्वरः**=सब उत्तमवरों (इच्छाओं) का पूरक स्वामी, श्रेष्ठ पदार्थों का अधीश्वर। **साम्राज्यार्क-विकाशकः**=उत्तम शासनरूपी सूर्य का प्रकाशक। **सुपर्णः**=उत्तम पालने की शक्ति से युक्त, पूर्ण कर्मों वाला। **सुरवरः**=देवों में उत्तम देव। **सूपायनः**=उत्तमता से ज्ञान, सुखसाधन और पदार्थों को प्राप्त कराने वाला, सुख से प्राप्त। **भवः**=सर्वत्र सत्ता वाला। **हिरण्यगर्भः**=सूर्य आदि तेजस्वी पदार्थों का उत्पत्ति-स्थान और आधार, सूर्य आदि के मध्य में भी वर्त्तमान। **होमार्पित-हुत-भेदकः**=हवन में प्रक्षिप्त घृतादि को सूक्ष्मरूप प्रदान करने वाला।

—o—

शयन-प्रार्थना-मन्त्र

ओम् अग्ने त्वं सु जागृहि वयं सुमन्दिषीमहि।
रक्षाणो अप्रयुच्छन् प्रबुधे नः पुनस्कृधि॥ १॥

—यजुः० ४.१४

अग्ने=हे नित्य चेतनस्वरूप प्रभो!
त्वम्=आप
सुजागृहि=उत्तम रीति से (स्वभावानुसार) जागते रहिये [जब कि]
वयम्=हम सब [आपकी कृपा से]
सु मन्दिषीमहि=आनन्दपूर्वक सोते रहें।
अप्रयुच्छन्=सर्वथा प्रमादरहित रहने वाले [आप]
नः=हमारी
रक्ष=रक्षा कीजिये।
पुनः=फिर (=शयन-समाप्ति के बाद)
नः=हमें
प्रबुधे=जागरूकता के लिये
कृधि=[तत्पर] कीजिये।

ओं सस्तु माता सस्तु पिता सस्तु श्वा सस्तु विश्पतिः।
ससन्तु सर्वे ज्ञातयः सस्त्वयमभितो जनः॥ २॥

[हे प्रभो! आपकी कृपा से]
माता=माता
सस्तु=शयन करे
पिता=पिता
सस्तु=सोवे
श्वा=गतिशील गृहसदस्य तथा कुत्ता
सस्तु=विश्राम करे [और]
विश्पतिः=गृहस्वामी [भी]
सस्तु=शयन करे।
सर्वे=समस्त
ज्ञातयः=बन्धु-बान्धव [भी]
ससन्तु=सोवें
अयम्=यह
अभितः=अन्दर-बाहर वर्त्तमान
जनः=मनुष्य-समुदाय [भी]
सस्तु=सो जावे।

ओम् य आस्ते यश्च चरति यश्च पश्यति नो जनः।
तेषां सं हन्मो अक्षाणि यथेदं हर्म्यं तथा॥ ३॥

नः=हमारा
यः=जो
जनः=मनुष्य (=गृहसदस्य)
आस्ते=बैठा है
च=और
यः=जो
चरति=चल रहा है
च=और
यः=जो
पश्यति=देख रहा है
तेषाम्=उन [सब] की
अक्षाणि=आँखों को [हम]
तथा=उसी प्रकार
सम् हन्मः=अच्छे प्रकार से ढ़क देते हैं
यथा=जैसे
इदम्=यह
हर्म्यम्=घर [किंवाड़ ढ़क देने पर निष्क्रिय हो जाता है]।

ओं सहस्रशृङ्गो वृषभो यः समुद्रादुदाचरत्।
तेना सहस्येना वयं नि जनान् त्स्वापयामसि॥ ४॥

सहस्रशृङ्गः=हजारों किरणों वाला
वृषभः=[ऊर्जा, प्रकाश और जल] बरसाने वाला सूर्य
यः=जो कि
समुद्रात्=अन्तरिक्ष से
उत्+आ+अचरत्=उदित हुआ था
तेन=उस
सहस्येन=सहन करने योग्य (=सायंकालीन) [सूर्य के] साथ ही

जनान्=मनुष्यों को
वयम्=हम
नि स्वापयामसि=निश्चिन्ततापूर्वक सुलाते हैं।

ओं प्रोष्ठेशया वह्येशया नारीर् यास् तल्पशीवरीः।
स्त्रियो याः पुण्यगन्धास् ताः सर्वाः स्वापयामसि ॥ ५ ॥
—ऋ० ७.५५.५-८

याः=जो
नारीः=स्त्रियाँ
प्रोष्ठेशयाः=तख्त पर सोनेवाली हैं
वह्येशयाः=खाट पर सोने वाली हैं [और]
याः=जो
तल्पशीवरीः=पलंग पर सोने वाली हैं [और]
याः=जो
स्त्रियः=स्त्रियाँ
पुण्यगन्धाः=मांगलिक गन्ध से युक्त हैं
ताः=उन-
सर्वाः=सब स्त्रियों को
स्वापयामसि=हम सुलाते हैं।

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति।
दूरङ्गमञ्ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ ६ ॥
येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः।
यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ ७ ॥
यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्जोतिरन्तरमृतं प्रजासु। यस्मान्न
ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ ८ ॥
येनेदम्भूतं भुवनम्भविष्यत् परिगृहीतममृतेन सर्वम्।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ ९ ॥
यस्मिन्नृचः साम यजूꣳषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः।
यस्मिँश्चित्तꣳ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ १० ॥
सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान् नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिनऽइव।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ ११ ॥
—यजुः० ३४।१-६

—०—

ओ३म्

ऋषि-गाथा

(गीतकार—श्री कविवर प्रदीप जी)

हम आज एक ऋषिराज की पावन कथा सुनाते हैं, पावन कथा सुनाते हैं।
आनन्दकन्द ऋषि दयानन्द की गाथा गाते हैं, हम कथा सुनाते हैं। ओ३म्, ओ३म्॥
हम एक अमर इतिहास के कुछ पन्ने पलटाते हैं, आनन्दकन्द ऋषि दयानन्द की गाथा गाते हैं........
ऋषिवर को लाख प्रणाम गुरुवर को लाख प्रणाम।
धर्म-धुरन्धर मुनिवर को, कोटि-कोटि प्रणाम, कोटि-कोटि प्रणाम॥
भारत के प्रान्त गुजरात में एक गाँव है टंकारा, उस गाँव के ब्राह्मणकुल में जन्मा एक बालक प्यारा।
बालक के पिता थे 'करसन जी' माँ थी अमृत बाई, उस दम्पती से हम सबने एक अनमोलनिधि पाई।
हम टंकारा की पुण्य भूमि को शीश झुकाते हैं। आनन्दकन्द ऋषि दयानन्द की गाथा गाते हैं......॥
हम कथा सुनाते हैं। ऋषिवर को लाख प्रणाम, गुरुवर को लाख प्रणाम।
फिर नामकरण की विधि हुई एक दिन करसन जी के घर, अमृत बा का प्यारा बेटा बन गया मूलशंकर।
पाँचवें बरस में स्वयं पिता ने अक्षर-ज्ञान दिया, आठवें बरस में कुलगुरु ने उपवीत प्रदान किया।
इस तरह मूल जी जीवनपथ पर चरण बढ़ाते हैं। आनन्दकन्द ऋषि दयानन्द की गाथा गाते हैं......॥
जब लगा चौदहवाँ साल तो एक दिन शिवरात्रि आई, उस रात की घटना से कुमार की बुद्धि चकराई।
जिस घड़ी चढ़े शिव के सिर पर चूहे चोरी-चोरी, मूल जी ने समझी तुरत मूर्त्तिपूजा की कमजोरी।
हर महापुरुष के लक्षण बचपन में दिख जाते हैं। आनन्दकन्द ऋषि दयानन्द की गाथा गाते हैं......॥
एक दिन माँ से पुत्र बोला माँ! दुनिया है फानी, मैं मुक्ति खोजने जाऊँगा, फानी है यह जिन्दगानी।
चुपचाप सुन रहे थे, बेटे की बात पिता ज्ञानी, जल्दी से उन्होंने उसका ब्याह कर देने की ठानी।
इस भाँति ब्याह की तैयारी करसन जी करते हैं। आनन्दकन्द ऋषि दयानन्द की गाथा गाते हैं......॥
शादी की बात को सुनके युवक में क्रान्तिभाव जागे, वे चुपचाप एक सुनसान रात में घर से निकल भागे।
तेजी से मूल जी में आये कुछ परिवर्त्तन भारी, दीक्षा लेकर वे बने शुद्धचैतन्य ब्रह्मचारी।
हम कभी-कभी भगवान् की लीला समझ न पाते हैं। आनन्दकन्द ऋषि दयानन्द की गाथा गाते हैं......॥
फिर जगह-जगह घूम युवक ने योगाभ्यास किया, कुछ काल बाद पूर्णानन्द ने उनको संन्यास दिया।
जिस दिवस शुद्धचैतन्य यहाँ संन्यासी पद पाये, वे स्वामी दयानन्द सरस्वती उस दिन से कहलाये।
हम जगप्रसिद्ध इस नाम पर अपना हृदय लुटाते हैं। आनन्दकन्द ऋषि दयानन्द की गाथा गाते हैं.....॥
संन्यास बाद स्वामी जी ने की घोर तपश्चर्या, सच्चे सद्गुरु की तलाश यही थी उनकी दिनचर्या।
गुजरात से पहुँचे विन्ध्याचल, फिर काटा पंथ बड़ा, फिर पार करके हरिद्वार, हिमालय का रस्ता पकड़ा।
अब स्वामीजी के सफर की हम कुछ और झलक दिखाते हैं। आनंदकंद ऋषि दयानंद की गाथा गाते हैं....॥
तीर्थों में गये मेलों में गये वो गये पहाड़ों में, जंगल में गये झाड़ी में गये वो गये अखाड़ों में।
हरएक तपोवन तपःस्थली में योगिराज ठहरे, पर हरएक मुकाम पर मिले उन्हें कुछ भेदभरे चहरे।
साधु से मिले सन्तों से मिले वृद्धों से मिले स्वामी, योगी से मिले यतियों से मिले सिद्धों से मिले स्वामी।
त्यागी से मिले तपसी से मिले वो मिले अक्खड़ों से, ज्ञानी से मिले ध्यानी से मिले वो मिले फक्कड़ों से।

पर कोई जादू कर न सका मन पर स्वामी जी के, सब ऊँची दूकानों के उन्हें पकवान लगे फीके।
योगी का कलेजा टूट गया वो बहुत हताश हुए, कोई सद् गुरु न मिला इससे वो बहुत निराश हुए।
आँखों से छलकते आँसू स्वामी रोक न पाते हैं। आनन्दकन्द ऋषि दयानन्द की गाथा गाते हैं..... ॥
इतने में अचानक अन्धकार में प्रकटा उजियारा, प्रज्ञाचक्षु का पता मिला एक वृद्ध सन्त द्वारा।
मथुरा में रहते थे एक सद्गुरु विरजानन्द स्वामी, उनसे मिलने तत्काल चल पड़े दयानन्द स्वामी।
आखिर एक दिन मथुरा पहुँचे तेजस्वी संन्यासी, गुरु के दर्शन से निहाल हुईं उनकी आँखें प्यासी।
गुरु के अन्तर्चक्षु ने पात्र को झट पहचान लिया, उसकी प्रतिभा को पहले ही परिचय में जान लिया।
सद्गुरु की अनुमति माँग दयानन्द उनके शिष्य बने, आगे चलकर यही शिष्य भारत के भविष्य बने।
गुरु आश्रम में स्वामी जी ने जमकर अभ्यास किया, हर विद्या में पारंगत बन आत्मा का विकास किया।
जो कर्मठ होते हैं वो मंजिल पा ही जाते हैं। आनन्दकन्द ऋषि दयानन्द की गाथा गाते हैं...... ॥
गुरुकृपा से एक दिन योगिराज वामन से विराट् बने, वो गूढ़ज्ञान की दुनिया के अनुपम सम्राट् बने।
सब छात्रों में थे अपने दयानन्द बड़े बुद्धिशाली, सारी शिक्षा बस तीन बरस में पूरी कर डाली।
जब शिक्षा पूर्ण हुई तो गुरु दक्षिणा के क्षण आये, मुट्ठीभर लौंग स्वामी जी गुरु की भेंट हेतु लाये।
जो लौंग लाये थे दयानन्द श्रद्धा से चाव से, वो लौंग लिये गुरु जी ने बड़े ही उदास भाव से।
स्वामी ने गुरु से विदा माँगी जब आई विदा घड़ी, तब अन्ध गुरु की आँख से गंगा जमुना उमड़ पड़ी।
वो दृश्य देखकर हुई बड़ी स्वामी को हैरानी, पर इतने में ही गुरु के मुख से निकल पड़ी वाणी।
जो वाणी गुरुमुख से निकली वो हम दुहराते हैं। आनन्दकन्द ऋषि दयानन्द की गाथा गाते हैं...... ॥
गुरु बोले 'सुनो दयानन्द! मैं निज हृदय खोलता हूँ, जिस बात ने मुझे रुलाया है, वो बात बोलता हूँ।
इन दिनों बड़ी दयनीय दशा है अपने भारत की, हिल गईं हैं सारी बुनियादें इस भव्य इमारत की।
पिस रही है जनता पाखण्डों की भीषण चक्की में, आपस की फूट बनी है बाधा अपनी तरक्की में।
है कुरीतियों की कारा में सारा समाज बन्दी, संस्कृति के रक्षक बने हैं भक्षक, हुए हैं स्वच्छन्दी।
कर दिया है गन्दा धर्मसरोवर मोटे मगरों ने, जर्जरित जाति को जकड़ा है बदमाश अजगरों ने।
भक्ति है फँसी मक्कारों के मजबूत शिकंजों में, आर्यों की सभ्यता रोती है पापियों के पंजों में।'
गुरु की वाणी सुनकर स्वामी जी व्याकुल हो जाते हैं। आनन्दकन्द ऋषि दयानन्द की गाथा गाते हैं...... ॥
गुरु फिर बोले 'ईश्वर बिकता है अब खुले बजारों में, आया है भयङ्कर परिवर्तन आचार-विचारों में।
हर चबूतरे पर बैठी है बन ठनकर चालाकी, इस ठगनी ने सबको ठगा है कोई न बचा बाकी।
बीमार सारा देश चल रही है प्रतिकूल हवा, कोई ऐसा जो इसकी करे दवा।
हे दयानन्द! इस दुःखी देश का तुम उद्धार करो, मझधार में है बेड़ा बेटा! तुम बेड़ा पार करो।
एक अन्ध गुरु की यही है इच्छा इस पर तुम ध्यान धरो, भारत के लिये तुम अपना सारा जीवन दान करो।
संकट में है अपनी जन्मभूमि तुम जाओ करो रक्षा, जाओ बेटे! भारत के भाग्य का तुम बदलो नक्शा'।
स्वामी जी गुरु की चरणधूल माथे पर लगाते हैं। आनन्दकन्द ऋषि दयानन्द की गाथा गाते हैं...... ॥
गुरु की आज्ञा अनुसार इस तरह अपने ब्रह्मचारी, करने को देश-उद्धार चल पड़े बन के क्रान्तिकारी।
कर दिया शुरु स्वामी जी ने एक धुँआधार दौरा, हर नगर गाँव के कुम्भकर्णों को झकझोरा।
दिन रात ऋषि ने घूम घूम कर अपना वतन देखा, जब अपना वतन देखा तो हर तरफ घोर पतन देखा।
मन्दिरों पर कब्जा कर लिया था मिट्टी के खिलौनों ने, बदनाम किया था भक्ति को बदनीयत बौनों ने।
रमणियाँ उतारा करती थीं आरती महन्तों की, वो दृश्य देखती रहती थी टोली श्रीमन्तों की।
छिप छिपकर लम्पट करते थे परदे में प्रेमलीला, सारे समाज के जीवन का ढाँचा था हुआ ढीला।

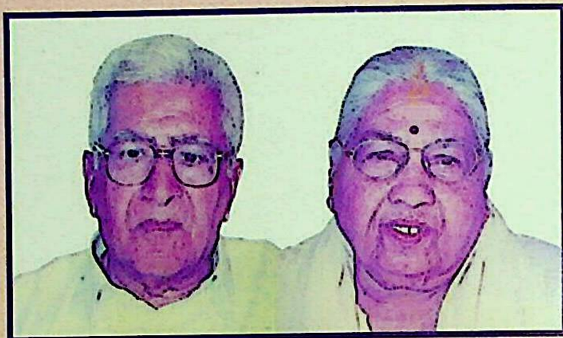
यह देख ऋषि सम्पूर्ण क्रान्ति का बिगुल बजाते हैं। आनन्दकन्द ऋषि दयानन्द की गाथा गाते हैं... ॥ धर्म धुरन्धर...
क्रान्ति का कर ऐलान ऋषि मैदान में कूद पड़े, उनके तेवर को देखकर हुए सबके कान खड़े।
एक हाथ में था झण्डा उनके एक हाथ में थी लाठी, वो चले बनाने हर हिन्दू को फिर से वेदपाठी।
हरिद्वार में कुम्भ का मेला था ऐसा अवसर पाकर, पाखण्डखण्डिनी ध्वजा गाड़ दी ऋषि ने वहाँ जाकर।
फिर लगे घुमाने संन्यासी जी खण्डन का खाण्डा, कितनी ही गुप्त बातों का उन्होंने फोड़ दिया भाँडा।
धज्जियाँ उड़ा दी स्वामी ने सब झूठे ग्रन्थों की, बखिया उधेड़कर रख दी सारे मिथ्या पन्थों की।
ऋषिवर ने तर्कतराजू पर सब धर्मग्रन्थ तोले, वेदों की तुलना में वो निकले सभी ग्रन्थ पोले।
वेदों की महत्ता स्वामी जी सबको समझाते हैं। आनन्दकन्द ऋषि दयानन्द की गाथा गाते हैं..... ॥
चलती थी हकूमत हर तीरथ पर लोभी पण्डों की, स्वामी ने पोल खोली उनके सारे हथकण्डों की।
आये ऋषि का विरोध करने गुण्डे हट्टे कट्टे, पर अपने वज्र पुरुष ने कर दिये उनके दाँत खट्टे।
दुर्दशा देश की देख ऋषि को होती थी ग्लानि, पुरखों की इज्जत पर लुच्चों ने फेरा था पानी।
बन गये थे देश के देवालय लालच की दूकानें, मन्दिरों में राम के बैठी थी रावण की सन्तानें।
स्वामी ने हर भ्रष्टाचारी का पर्दाफाश किया, दम्भियों पर करके प्रहार हरएक पाखण्ड का नाश किया।
लाखों हिन्दू संगठित हुए वैदिक झण्डे के तले, जलने वाले कुछ द्वेषी इस घटना से बहुत जले।
इस तरह देश में परिवर्त्तन स्वामी जी लाते हैं। आनन्दकन्द ऋषिदयानन्द की गाथा गाते हैं..... ॥
कुछ काल बाद स्वामी जी ने काशी जाने की ठानी, उस कर्मकाण्ड की नगरी पर अपनी भृकुटि तानी।
जब भरी सभा में स्वामी की आवाज बुलन्द हुई, तब दंग हो गये लोग, बोलती सबकी बन्द हुई।
'वेदों में मूर्त्तिपूजा है कहाँ?' स्वामी ने सवाल किया, इस विकट प्रश्न ने सभी दिग्गजों को बेहाल किया।
काशी वालों ने बहुत सिर फोड़ा, की माथापच्ची, पर अन्त में निकली दयानन्द की ही बात सच्ची।
मच गया तहलका अभिमानी धर्माधिकारियों में, भारी भगदड़ मच गई सभी पण्डित पुजारियों में।
इतिहास बताता है उस दिन काशी की हार हुई, हर एक दिशा में ऋषिराजा की जय जयकार हुई।
अब हम कुछ और करिश्मे स्वामी के बतलाते हैं। आनन्दकन्द ऋषिदयानन्द की गाथा गाते हैं..... ॥
उन दिनों बोलती थी घर घर में मर्दों की तूती, हर पुरुष समझता था, औरत को पैरों की जूती।
ऋषि ने छुड़वाया जुल्मों से अबला बेचारी को, जगदम्बा के सिंहासन पर बैठा दिया नारी को।
बदकिस्मत बेवाओं के भाग्य भी उन्होंने चमकाये, उनके हित नाना नारीनिकेतन आश्रम खुलवाये।
स्वामी जी देख सके ना विधवाओं की करुण व्यथा, करवा दी शुरु तुरत उन्होंने पुनर्विवाह-प्रथा।
होता था धर्मपरिवर्त्तन भारत में खुल्लमखुल्ला, जनता को नित्य भरमाते थे पादरी और मुल्ला।
स्वामी ने उन्हें जब कसकर मारा शुद्धि का चाँटा, सारे प्रपञ्चियों की दुनिया में छा गया सन्नाटा।
फिर भक्तों के आग्रह से महर्षि बम्बई जाते हैं। आनन्दकन्द ऋषिदयानन्द की गाथा गाते हैं......... ॥
भारत के सब नगरों में नगर बम्बई था भाग्यशाली, ऋषि जी ने पहले आर्यसमाज की नींव वहीं डाली।
फिर उसी वर्ष स्वामी से हमें 'सत्यार्थप्रकाश' मिला, मन पंछी को उड़ने के लिये नूतन आकाश मिला।
सदियों से जो दूर खड़े थे अपने अछूत भाई, ऋषि ने उनके सिर पर इज्जत की पगड़ी बँधवाई।
जो तंग आ चुके थे अपमानित जीवन जीने से, उन सब दलितों को स्वामी ने लगा लिया सीने से।
बम्बई के बाद ऋषि एक रोज पंजाब जा निकले, उनके चरणों के पीछे पीछे लाखों चरण चले।
लाखों लोगों ने मान लिया स्वामी को अपना गुरु, सत्संग कथा कीर्त्तन प्रवचन घर घर हो गये शुरु।
स्वामी का जादू देख सब चकराते हैं। आनन्दकन्द ऋषिदयानन्द की गाथा गाते हैं......... ॥
पंजाब के बाद राजपूताना पहुँचे नरबंका, देखते देखते वहाँ भी बजा वेदों का डण्का।

अगणित जिज्ञासु आने लगे स्वामी की सभाओं में, मच गई धूम वैदिक मन्त्रों की सभी दिशाओं में।
सब भेदभाव की दीवारों को चकनाचूर किया, सदियों का कूड़ाकर्कट स्वामी जी ने दूर किया।
ऋषि के उपदेशों ने लाखों की तकदीर बदल डाली, जो बिगड़ी थी सदियों से वो तस्वीर बदल डाली।
फिर वीरभूमि मेवाड़ में पहुँचे अपने ऋषि ज्ञानी, खुद उदयपुर के राणा ने की उनकी अगवानी।
राणा ने उन्हें देनी चाही एकलिंग जी की गादी, पर वो महन्त की गादी ऋषि ने सविनय ठुकरा दी।
इतने में जोधपुर का आमन्त्रण स्वामी पाते हैं। आनन्दकन्द ऋषिदयानन्द की गाथा गाते हैं......... ॥
उन दिनों जोधपुर के शासन की थी बड़ी बदनामी, भक्तों ने रोका फिर भी बेधड़क पहुँच गये स्वामी।
जसवन्तसिंह के उस राज में था दुष्टों का बोलबाला, राजा था विलासी इस कारण हर तरफ़ था घोटाला।
एक नीच तवायफ़ बनी थी राजा के मन की रानी, थी बड़ी चुलबुली वो चुड़ैल करती थी मनमानी।
स्वामी ने राजा को सुधारने किये अनेक यतन, पर बिल्कुल न बदल पाया राजा का चालचलन।
कुलटा की पालकी को एक दिन राजा ने दिया कन्धा, स्वामी क़ो भारी दुःख हुआ वो दृश्य देख गन्दा।
स्वामी जी बोले 'हे राजन्! तुम यह क्या करते हो, तुम शेरपुत्र होकर एक कुतिया पर मरते हो'।
स्वामी जी सारा महल गुँजाते हैं। आनन्दकन्द ऋषिदयानन्द की गाथा गाते हैं......... ॥
राजा ने तुरत माफी माँगी होकर के शर्मिंदा, पर आगबबूला हो गई वेश्या सह न सकी निन्दा।
षड्यन्त्र रचा ऋषि के विरुद्ध कुलटा पिशाचिनी ने, जहरीला जाल फैलाया उस विकराल साँपिनी ने।
वेश्या ने ऋषि के रसोइये पर दौलत बरसा दी, पाकर सम्पदा अपार वो पापी बन गया अपराधी।
सेवकने रात के दूध में गुपचुप संखिया मिला दिया, फिर काँच का चूरा डाल ऋषिराजा को पिला दिया।
भोले ऋषि ने पी लिया दूध वो मधुर स्वाद वाला, पर फौरन स्वामी भाँप गये कुछ दाल में है काला।
अपने सेवक को तुरन्त ही बुलवाया स्वामी ने, खुद उसके मुख से सकलभेद खुलवाया स्वामी ने।
पश्चात्तापी को महामना नेपाल भगाते हैं। आनन्दकन्द ऋषिदयानन्द की गाथा गाते हैं......... ॥
आये डॉक्टर, आये हकीम और वैद्यराज आये, पर दवा किसी की नहीं लगी सबके सब घबराये।
तब रुग्ण ऋषि को जोधपुर से ले जाया गाया आबू, पर वहाँ भी उनके रोग पर कोई पा न सका काबू।
आबू के बाद अजमेर उन्हें भक्तों ने पहुँचाया, कुछ ही दिनों में ऋषि समझ गये अब अन्तकाल आया।
वे बोले 'हे प्रभु! तूने मेरे संग खूब खेल खेला, तेरी इच्छा से मैं समेटता हूँ जीवन मेला।
बस एक यही विनति है अन्तर्यामी, मेरे बच्चों को तू सम्भालना जगपालक स्वामी।'

जब अन्तघड़ी आई तो ऋषि ने 'ओम्' शब्द बोला, केवल 'ओम्' शब्द बोला,
फिर चुपके से धर दिया धरा पर नाशवान् चोला।

इस तरह ऋषि तन का पिञ्जरा खाली कर जाते हैं। आनन्दकन्द ऋषिदयानन्द की गाथा गाते हैं......... ॥
संसार के आर्यो! सुनो हमारा गीत है एक गागर, इस गागर में हम कैसे भरें ऋषि-महिमा का सागर।
'स्वामी जी क्या थे, कैसे थे' हम यह न बता सकते, उनकी गुणगरिमा अल्प समय में हम नहीं गा सकते।
सच पूछो तो भगवान् का एक वरदान थे स्वामी जी, हर दशकन्धर के लिये राम का बाण थे स्वामी जी।
प्रतिभा के धनी एक जबर्दस्त इन्सान थे स्वामी जी, हिन्दी, हिन्दू और हिन्दुस्तान के प्राण थे स्वामी जी।
क्या वर्मा क्या मौरीशस क्या सुरिनाम क्या फीजी, इन सब देशों में विद्यमान हैं आज भी स्वामी जी।
केनिया गुवाना ट्रिनिडाड सिंगापुर युगंडा, उड़ रहा सब जगह शान से आर्यों का झण्डा।
हर आर्यसमाज में आज भी स्वामी जी मुसकाते हैं। आनन्दकन्द ऋषिदयानन्द की गाथा गाते हैं....... ॥

—०—



[स्मृतिशेष]

श्री शम्भुमल भागचन्दानी, श्रीमती राधादेवी भागचन्दानी

श्रद्धालु पवित्र भागचन्दानी परिवार के सेवाभावी सदस्य



सम्पादक का आश्रय निकेतन-

राधिका आर्य निवास,
89 – A, शिव मंदिर रोड,
रातानाडा, जोधपुर – 342 001